
चन्दामामा
50
M.T.V. Acharya



युद्ध समाप्त हो गया। परन्तु पहले कौन पीछे हटे यह न मालूम हो सका। "पहले उसे पीछे हटने के लिए कहिये। वह जब मेरे सामने खड़ा हो तो क्या मैं पीठ दिखाकर चला जाऊँगा?" परशुराम ने कहा।

"मेरी एक प्रतिज्ञा है कि मैं युद्ध में पीठ न दिखाऊँगा। मेरी पीठ पर बाण नहीं लगना चाहिये।" भीष्म ने कहा। सबने मिलकर परशुराम से ही युद्ध समाप्त करवाया। तब भीष्म आकर उनके पैरों पर पड़ा। परशुराम ने मुस्कराकर कहा - "क्षत्रियों में मैंने तुम सा कहीं न देखा। तुम्हारा युद्ध मुझे बहुत पसन्द आया।"

फिर परशुराम ने अम्बा की ओर मुड़कर कहा-"तूने अब सब कुछ देख ही लिया है। जो कुछ मुझसे हो सकता था वह मैंने तुम्हारे लिये किया। अब मैं कुछ नहीं कर सकता।" कहकर उसने लम्बा निश्वास छोड़ा।

परशुराम के यह कहते ही कि भीष्म ने उसको हरा दिया है; अम्बा ने कहा-"महात्मा, आप जो कुछ मेरे लिये कर सकते थे, आपने किया, पर मेरा कोई लाभ न हुआ। वह भीष्म जो आपके सामने नहीं झुका देवताओं के सामने भी न झुकेगा। फिर भी मैं भीष्म से शरण नहीं मागूँगी। कहीं न कहीं कभी न कभी, मुझे ही उसे हराना होगा।" यह कहकर वह चली गई।

परशुराम मुनियों के साथ महेन्द्रगिरि चला गया। भीष्म, ब्राह्मणों का आशीर्वाद पाकर घर वापस आ गया।

उसने सत्यवती को सारा वृत्तान्त सुनाया। उसने भीष्म की बहुत प्रशंसा की। फिर भीष्म ने अम्बा के पीछे भेदियों को भेजा और उनको आज्ञा दी कि वे यह मालूम करें कि वह कहाँ कहाँ जाती है, और क्या क्या करती है। आज्ञानुसार वे अम्बा के बारे में समय समय पर उसको जानकारी देते रहे।

अम्बा, भीष्म की राह में काँटे की तरह थी। वह यह प्रतिज्ञा करके चली गई थी कि उसको मारने के लिए वह तपस्या करेगी। परशुराम जैसा तपस्वी ही उसे जीत न पाया था। परन्तु अम्बा का ख्याल करके भीष्म डरने लगा था। आखिर उसने व्यास और नारद को अपने भय के बारे में बताया।

"तुम्हारा अम्बा के विषय में इतना भयभीत होना अनावश्यक है। जैसा भाग्य में लिखा है वैसा ही होगा।" दोनों ने अलग अलग भीष्म को आश्वासन दिया।

अम्बा, कुरुक्षेत्र से जाकर, यमुना किनारे ऋषियों के आश्रमों में जाकर घोर तपस्या करने लगी।



उसने भोजन छोड़ दिया। शरीर को तपाया, शरीर पर मिट्टी लगाकर तपस्या की। गले तक पानी में, डूबकर छः महीने तपस्या की। एक साल तक कुछ न खाया, फिर दिन में एक फल खाने लगी। पैर की अंगुली पर खड़े होकर एक वर्ष और तपस्या की। कई ने कई तरह से कहा, पर उसने अपनी तपस्या न छोड़ी।

फिर वह वत्स देश गई। वहाँ के आश्रम भी उसने देखे। वह पुण्य क्षेत्रों के दर्शन करती ध्ववनाश्रम, ब्रह्मस्थान, प्रयाग, देवोरथ, भोगवती, रामहूद आदि जगह पर गई।

अम्बा जब इस प्रकार तपस्या करती, जगह जगह घूम रही थी, तब भीष्म की माता गङ्गा ने उससे पूछा-"क्यों बेटी! तुम क्यों इतने कष्ट झेल रही हो?"

"मेरे लिये परशुराम जैसे ने भीष्म से युद्ध किया और वह भी हार गया। वैसे भीष्म को और कौन मार सकता है? मैं उसको मारने के लिए शक्ति पाने का प्रयत्न कर रही हूँ। मेरा प्रयत्न सफल हो, कृपया यह वर दीजिये।" अम्बा ने कहा।

"स्त्री जन्म लिया है और ये कैसी इच्छायें हैं? ये कभी सफल न होंगी। इसी प्रयत्न में यदि तू मरी, तो तू नदी हो कर रहेगी। तुम में भयङ्कर मगर होंगे। साल में चार महीने ही तुम में पानी रहेगा। शेष आठ महीने तुम्हें देखकर कोई तुम्हें नदी भी न बतायेगा।" कहकर गङ्गा चली गई।

कुछ दिनों बाद, जो गङ्गा ने कहा था वही हुआ। अम्बा मत्स्यदेश में चलती चलती मूर्छित होकर गिर गई। जहाँ वह गिरी वहाँ अम्बा नदी निकली। उस नदी में वर्षा ऋतु में बाढ़ आती है। उस में भयङ्कर मगर हैं। वर्ष में आठ महीने उसमें पानी नहीं होता।



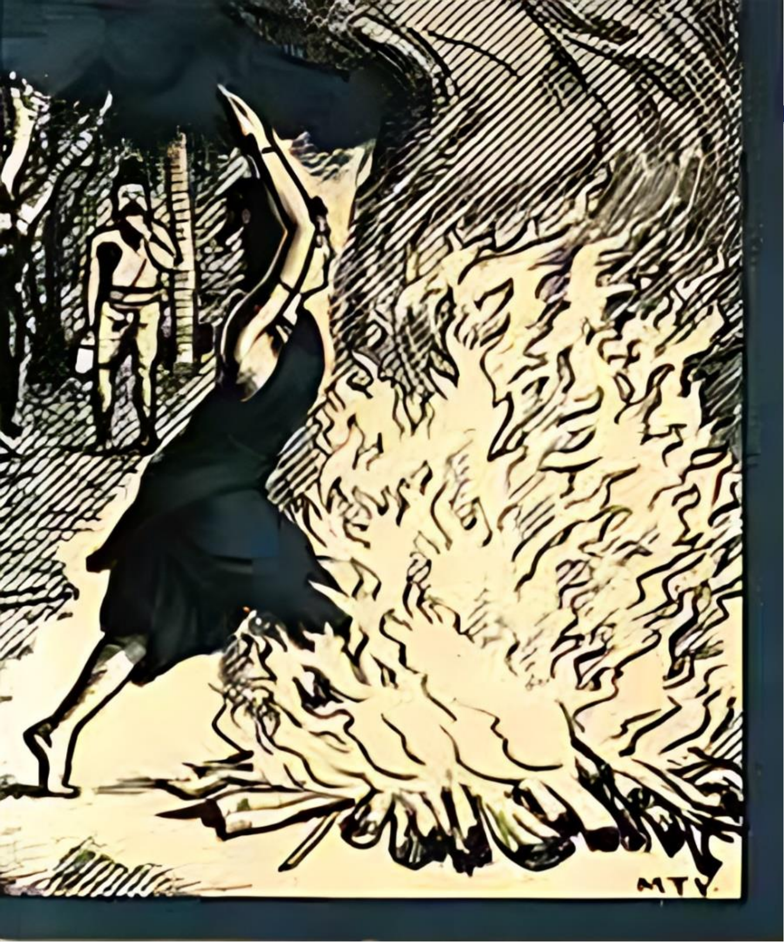
अम्बा को देखकर कई ऋषियों ने पूछा- "क्यों तुम इतनी तपस्या कर रही हो?"

उन सबसे अम्बा ने कहा-"मैं परलोक और स्वर्ग नहीं चाहती। जैसे भी हो भीष्म को मारने के लिए मैं यह तपस्या कर रही हूँ। मेरे लिए न पति है, न गृहस्थी ही। न मेरा स्त्री जीवन है, न पुरुष जीवन ही है। मैं स्त्री जीवन से ऊब गई हूँ। कुछ भी हो मुझे पुरुष जन्म लेना है और भीष्म को युद्ध में मारना है। इसलिये आप मुझे न ठुकराइये। मैं उसका खातमा करके ही विश्राम लूँगी।"

आखिर अम्बा की इच्छा पूरी हुई। शिव उसकी तपस्या से सन्तुष्ट होकर प्रत्यक्ष हुए। उसने पूछा-"तुम क्या वर चाहती हो?" "भीष्म को जीतने के लिए मुझे शक्ति प्रदान कीजिये।" शिवजी ने कहा- "तथास्तु"।

"भगवान, मैं तो स्त्री हूँ। भीष्म जैसे पराक्रमशाली को कैसे जीत सकूँगी? क्या आपकी बात असत्य न होगी?" अम्बा ने कहा।





"कभी न होगा। अगले जन्म में तू पुरुष होगी, तुम भीष्म का संहार करोगी।" शिव ने कहा।

शिव के अन्तर्धान होते ही मुनियों के समक्ष ही अम्बा ने एक चिता बनाई। यमुना नदी की ओर मुँह करके नमस्कार किया। "भीष्म को मारने के लिए मैं अभि में प्रवेश कर रही हूँ।" कह कर, वह चिता मैं गिर कर जल गई।

इसी समय, पाञ्चाल देश का राजा द्रुपद भी शिव की तपस्या कर रहा था। उसकी तपस्या के दो उद्देश्य थे। द्रुपद के बच्चे न थे। उसकी एक इच्छा थी कि उसको सन्तान प्राप्ति हो। भीष्म ने द्रुपद को हरा रखा था, इसलिए उसकी दूसरी इच्छा थी कि उसका पुत्र भीष्म पर विजय पानेवाला हो।

द्रुपद की तपस्या भी सफल हुई। शिव ने प्रत्यक्ष होकर वर दिया- "तुम्हें एक लड़की पैदा होगी।"

"भगवान, लड़की किसलिये? मुझे तो एक ऐसा लड़का दीजिये, जो भीष्म को पराजित कर सके।" द्रुपद ने कहा।

"यह लड़की ही फिर लड़का बन कर भीष्म को मार सकेगी। तुम इतने से सन्तुष्ट होकर घर जाओ।" शिव ने कहा।

द्रुपद ने घर आकर अपनी पत्नी को, जो कुछ हुआ था, सुनाया। फिर द्रुपद की पत्नी गर्भिणी हुई। नौ मास बाद शिव के कथनानुसार उसने एक लड़की को जन्म दिया। उस लड़की का रहस्य केवल उसके माता पिता ही जानते थे। द्रुपद ने सबसे यही कहा कि उसको एक लड़का ही पैदा हुआ था। उस लड़की का नाम शिखण्डी रखा गया।

शिखण्डी को बालकों के ही कपड़े पहनाये गये। बालक की तरह ही उसे पाला पोसा गया। उसको चित्रकला, मूर्तिकला; आदि सिखाई गई। बाण विद्या भी। द्रुपद का यह विश्वास था कि वह यकायक पुरुष हो जायेगी। परन्तु उसको शिखण्डी में स्त्री लक्षण ही दिखाई दिये। उसने भय से अपनी पत्नी से पूछा- "मैं शिव की बात में विश्वास कर सब से अभी तक यही झूठ कहता आया हूँ कि यह लड़का है। पर अब ऐसा मालूम होता है कि यह सयानी होगी और भेद खुल जायेगा। मैं तो पागल सा हो रहा हूँ। अगर तुम्हें कोई उपाय सूझे तो बताओ।"

"इसका एक ही उपाय है। योग्य कन्या देखकर इसका विवाह कर दिया जाय। फिर शिव के कथनानुसार यह पुरुष हो ही जायेगी। तब कोई कठिनाई न रहेगी।" द्रुपद की पत्नी ने कहा। द्रुपद को भी यह सलाह जँची।

दशार्ण देश में, हिरण्यवर्मा नाम के राजा की एक सयानी लड़की थी। हिरण्यवर्मा के पास बहुत-सी सेना थी। वह बहुत बलवान भी था। द्रुपद ने अपने सामन्तों को हिरण्यवर्मा के



कुल गोत्र आदि के बारे में बताकर कहा कि उसकी लड़की शिखण्डनी से, अपने लड़के शिखण्डी का विवाह करवा रहा था। पाञ्चाल राजा से सम्बन्ध करने केलिये, दशार्ण का राजा, हिरण्यवर्मा भी उत्सुक था।

शिखण्डी और शिखण्डनी का विवाह हुआ। शिखण्डी का भेद शिखण्डनी को पता लग गया। उसने अपनी दासियों से कहा-"मेरा पति पुरुष नहीं है, वह मेरी तरह एक स्त्री है।" सबको अचरज हुआ। उन्होंने छुपे छुपे यह खबर दशार्ण देश के राजा तक पहुँचाई।

यह जानकर कि द्रुपद ने, उसको और उसकी लड़की को धोखा दिया था, हिरण्यवर्मा आगबबूला हो गया। "यह झूठ बोलकर कि तुम्हारी लड़की, लड़का है; मेरी लड़की का तुमने उससे विवाह करवाया। इसलिये मैं तेरे वंश का सर्वनाश करके रहूँगा।" उसने यह निश्चय, एक दूत के द्वारा, द्रुपद को बताया। उसने यह बात द्रुपद के कान में कही।

जब उसे पता लगा कि वह भेद, जिसको वह इतने दिनों से छुपाये हुए था, हिरण्यवर्मा को मालूम हो गया था, द्रुपद को काठ मार गया। उसके मुख से बात न निकली। उसने मधुरभाषियों को बुलाकर कहा-" तुम हिरण्यवर्मा के पास जाओ। उनसे कहो कि मैंने उनको धोखा नहीं दिया है। समझा बुझाकर उनका गुस्सा ठण्डा करो।"

परन्तु द्रुपद के ये प्रयत्न सफल नही हुये। जब हिरण्यवर्मा को यह निश्चित रूप से मालूम हो गया कि उसका दामाद एक लड़की थी तो उसने अपने बन्धुवर्ग को बुलाया; द्रुपद को मारने के लिए अपनी सेनाओं के साथ कूच करने के लिए कहा। हिरण्यवर्मा के बन्धुओं ने कहा-"जो, तुम कह रहे हो, अगर वह सच हो तो हम उसे बाँधकर लायेंगे। उसकी लड़की और बन्धुओं को मारकर पाञ्चाल देश का नया राजा बनायेंगे।"

हिरण्यवर्मा के यहाँ से दूतों ने आकर कहा-"हमारे राजा, आपको मारने के लिए आ रहे हैं। आप भी युद्ध के लिए तैयार हो जाइये।" द्रुपद ने रौब से उनको भेज तो दिया पर मन ही मन वह घबरा रहा था। वह बहुत डरपोक था, और तिस पर उसने अपराध भी किया था।



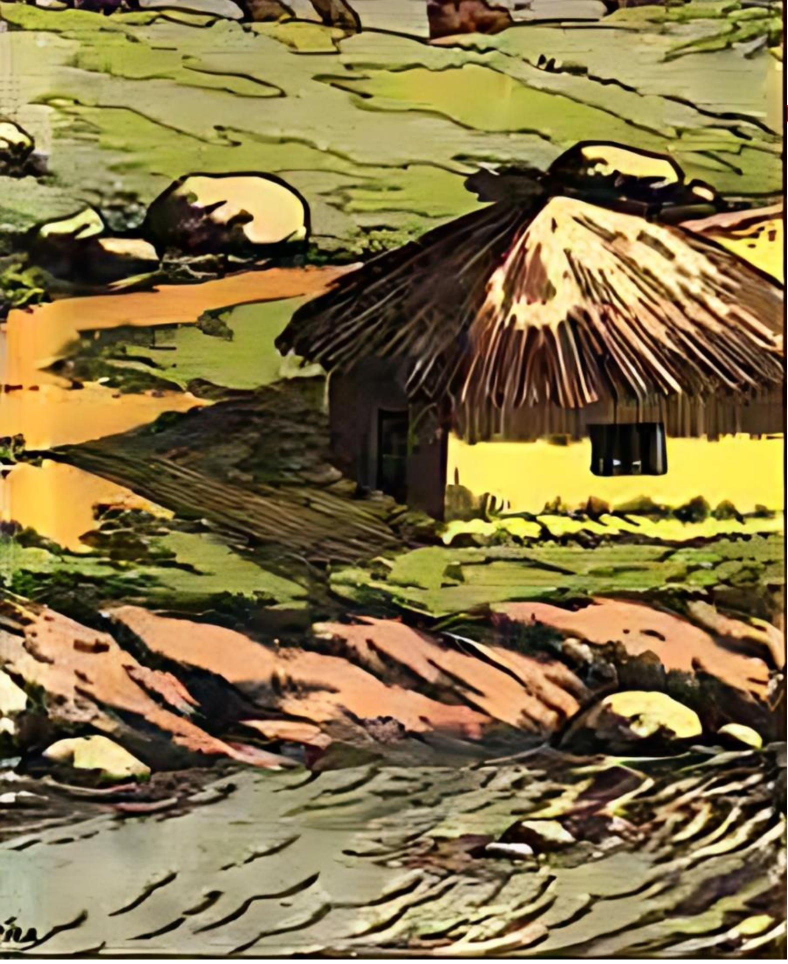


[१३]

[चन्द्रवर्मा और कपालिनी मिलकर शंख के पहाड़ पर गये। वहाँ कपालिनी के लिए चन्द्रवर्मा और कालकेतु ने एक घर बनाया। चन्द्रवर्मा अगले दिन सवेरे कालकेतु और कपालिनी से बिदा लेकर जङ्गलों में घुसा। उसे एक बड़े पेड़ के नीचे एक लोहे की जञ्जीर दिखाई दी। तुरत उसको एक भयङ्कर कुत्ता भोकता दिखाई दिया। यह कुत्ता उसकी ओर आ रहा था। बाद में....]

कुत्ते रूपी भूत ने मुख खोलकर, ज्योंहि कूदकर उसका गला पकड़ना चाहा, त्योंहि चन्द्रवर्मा अपनी तलवार उसकी छाती में घुसेड़ने के लिए आगे बढ़ा। उसी समय, उसके बायें हाथ की जञ्जीर उस कुत्ते के सिर पर पड़ी। इसी कारण वह चन्द्रवर्मा के सिर पर से होता हुआ, कुछ दूर जा गिरा। चन्द्रवर्मा झट पीछे हटा, जब जोर से भौंकते हुए कुत्ते के पास जाने लगा, तो वह उठा और थोड़ी देर चन्द्रवर्मा के हाथ की जञ्जीर देखता पीछे हटा, और पेड़ों के पास जा खड़ा हुआ। खड़ा खड़ा दुम हिलाने लगा।

उस कुत्ते में इतना परिवर्तन देख चन्द्रवर्मा को आश्चर्य हुआ। उसने उस जञ्जीर की ओर देखा, फिर उसको इस तरह फेंका कि वह कुत्ते के पास जा गिरे। कुत्ते ने उसको सूंघा। फिर उसको मुख में रखकर,



चन्द्रवर्मा के पास आकर दुम हिलाता खड़ा हो गया।

यह देख चन्द्रव ताड़ गया कि उस जिञ्जीर में कोई रहस्य था। उसने उसको, कुत्ते के मुख से निकाला। उसका एक सिरा उसके गले में डाल, दूसरा अपने हाथ में लेकर वह खड़ा हो गया।

कुत्ते ने एक बार चारों तरफ देखा जोर से भौंकते हुये चन्द्रवर्मा को झाड़ियों की ओर खींचने लगा। यह जान कि वह उसको कहीं ले जाना चाहता था, चन्द्रवर्मा धैर्यपूर्वक उसके पीछे चलने लगा। तब चन्द्रवर्मा को लगा कि वह शायद कुत्ते के रूप में कोई राक्षस न था परन्तु सचमुच कुत्ता ही था।

कुत्ता, काँटों की झाड़ियों में थोड़ी दूर चलने के बाद, चन्द्रवर्मा को एक टीले पर ले गया। उस टीले के नीचे एक नाले के किनारे, एक छोटी-सी झोपड़ी चन्द्रवर्मा को दिखाई दी। चन्द्रवर्मा ने अनुमान किया कि शायद उस झोपड़ी में कुत्ते का मालिक रहता होगा और वह उसको उसके पास ले जा रहा होगा। उसके बाद उसने जञ्जीर का वह सिरा भी उसके गले में लपेट दिया, जो उसके हाथ में था। उसके पीछे चलता चलता वह उस झोंपड़ी के पास पहुँचा।

झोपड़ी में से कोई भी बाहर न आया। कुत्ता जोर से भौक्ता, झोंपड़े के अन्दर गया। फिर बाहर आकर चारों ओर देखने लगा। जाने इस झोपड़ी में कौन रह रहा होगा। यह सोचता चन्द्रवर्मा झोपड़ी में घुसा। अन्दर कोई न था। एक तरफ एक टूटी फूटी खटिया थी। दूसरी तरफ़, दीवार से लगी एक भट्टी थी और भट्टी के सामने मिट्टी के दो तीन हण्डे थे। एक

रस्सी पर एक कम्बल, दो चार फटे पुराने कपड़े लटक रहे थे।

चन्द्रवर्मा समझ गया कि उस झोंपड़े में कोई गरीब रह रहा था। परन्तु तभी उसको एक सन्देह भी हुआ कि इतने भयङ्कर जङ्गल में, इस गरीब को अपना समय इस तरह बिताने की क्या पड़ी है! कहीं यह भी कोई मान्त्रिक तो नहीं है! कौन हो सकता है?

यह सन्देह होते ही, चन्द्रवर्मा आगे बढ़ा। भट्टी के पास के हण्डों को गौर से देखने लगा। उसका ख्याल था कि अगर वहाँ कोई नरभक्षक रहता होगा तो मनुष्यों की हड्डियाँ, उन हण्डों में मिल सकेंगी।

चन्द्रवर्मा गौर से देख रहा था कि पीछे से आवाज आई-"जहाँ खड़े हो वहाँ से मत हिलो। अगर हिलने की कोशिश की तो पीछे से भाला भोंक दूँगा। बिना पीछे मुड़े मेरे प्रश्नों का उत्तर दो।"

चन्द्रवर्मा पसीना पसीना हो गया। खतरा कहाँ था यह भी वह न जान सकता था। शायद पीठ पीछे खड़ा दुश्मन, भाला लिये, मेरी पीठ पर निशाना साधे खड़ा होगा। इसलिए



पीछे मुड़ना व्यर्थ है। वह क्या प्रश्न करना चाहता है?

"मैं तुम्हारा शत्रु नहीं, मित्र हूँ। मेरी शक्ल देख कर, तुम यह जान सकोगे।" चन्द्रवर्मा ने अपने भय को छुपाते हुए कहा।

"तुम और मेरे मित्र? छी" पीछे खड़े व्यक्ति ने कहा। फिर थोड़ी देर ठहरकर उसने पूछा-"वे राज सैनिक कहाँ हैं, जो तेरे साथ आये थे?"

"राज सैनिक?" चन्द्रवर्मा ने आश्चर्य से कहा-"मैं इस जङ्गल में अकेला ही

घूम रहा हूँ। भगवान की दया से अगर यह जञ्जीर न मिलती तो मैं इस कुत्ते का शिकार हो गया होता। इस कुत्ते ने रास्ता दिखाया और मैं इस तरफ चला आया।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस जञ्जीर के कारण तेरी जान बची। उस जञ्जीर को मेरा लड़का कुत्ते के गले में डालकर, उसके साथ साथ जङ्गल में घूमा करता था। जब राज सैनिक उसको पकड़कर ले गये तो यह जञ्जीर कहीं गिर गई। उस जञ्जीर को तेरे हाथ में देखकर कुत्ते ने सोचा कि तुम उसके मालिक के मित्र होगे। और इसलिये उसने तुम्हें मारा नहीं। खैर, क्या मेरा लड़का जीवित है या राजा ने उसे मरवा दिया है?" उस व्यक्ति ने पूछा।

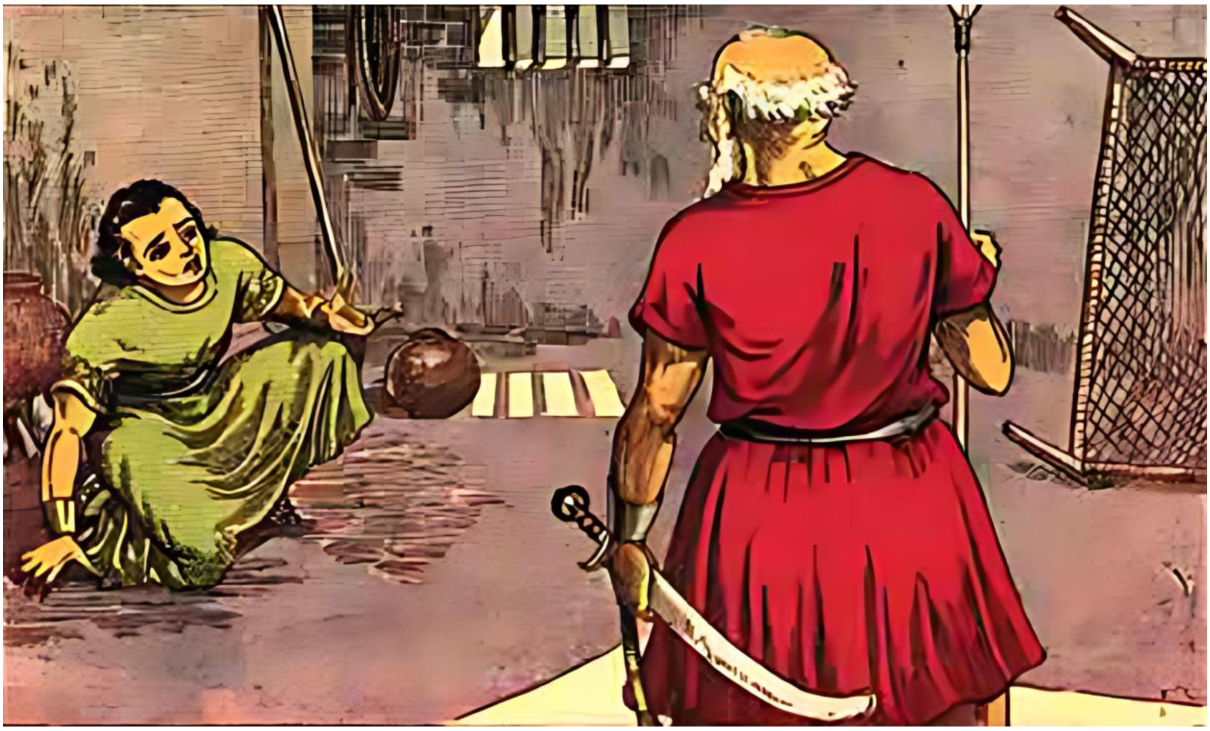
चन्द्रवर्मा को कुछ समझ में नहीं आया। यह मुझे कोई राज सैनिक समझ रहा है। यह जानकर कि मैं भी उन लोगों में से था, जो उसके लड़के को सता रहे थे, वह मेरे पीछे भाला लेकर खड़ा है। अब इस आपत्ति से कैसे निकला जाय? क्या किया जाय?



चन्द्रवर्मा की झट एक उपाय सुझा। उसने कमर से लटकती अपनी तलबार दिखाकर कहा-"जाने आप कौन हैं, आप व्यर्थ मुझ पर सन्देह कर रहे हैं। मैं उन राज सैनिकों में से नहीं हूँ, जो आपके लड़के को पकड़कर ले गये हैं। मैं यह भी नहीं जानता कि वह कौन है, जिसे आप राजा बता रहे हैं। आप मेरी इस तलवार को ले लीजिये, तब में निहत्था हो जाऊँगा। हम दोनों आराम से बैठकर बातचीत कर सकेंगे।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा ने अभी कहना खतम न किया था कि पीछे खड़े व्यक्ति ने चन्द्रवर्मा की तलवार ले ली और कठिन स्वर में कहा-"अब पीछे मुड़ सकते हो। कहीं धोखा देने की कोशिश की तो मारे जाओगे।"

चन्द्रवर्मा ने सन्तोष की साँस ली और पीछे मुड़कर देखा। उसे एक बूढ़ा दिखाई दिया। उसकी उम्र करीब सत्तर वर्ष की होगी। उसके सिर और दाढ़ी के बाल बिल्कुल पक गये थे। चेहरे पर झुर्रियाँ ही झुर्रियाँ थी। वह एक हाथ में





भाला और दूसरे में तलवार लिये खड़ा था। उसकी आँखें अङ्गारे हो रही थीं।

"मैं राज-सैनिक नहीं हूँ, मैं कभी किसी देश का राजा था और आज जङ्गलों मैं मारा मारा फिर रहा हूँ। वह कौन राजा है, जो आपके लड़के को पकड़कर ले गया है?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

"क्या तुम यह भी नहीं जानते कि तुम किस राज्य में हो?" उस बूढ़े ने अपना सन्देह प्रकट करते हुए पूछा।

चन्द्रवर्मा ने अपना सिर हिलाकर उसे बताया कि वह यह न जानता था। बूढ़े ने आँखें बड़ी बड़ी करके थोड़ी देर चन्द्रवर्मा

को गौर से देखा। "तुम्हारी बातों और वेषभूषा से यही जान पड़ता है कि तुम इस इलाके में नये नये आये हो। अगर तुम सचमुच अपना राज्य खोकर जङ्गलों में दर दर भटक रहे हो, तो मैं तुम्हारी मदद अवश्य करूँगा। मैं तुम्हारी मदद करूँगा और तुम मेरी मदद करो। बचन दो। समझे?"

"आप मुझसे क्या सहायता चाहते हैं?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

"मेरे लड़के को रुद्रपुर का राजा, शिवसिंह पकड़कर ले गया है। मैं उसके सैनिकों से छुपता इस जङ्गल में घूम रहा हूँ। राजा से दुश्मनी करके, मैं इस जङ्गल में अधिक दिन जीवित रह सकूँगा, इसकी मुझे आशा नहीं है। अब तक राजा ने मेरे लड़के को अगर मरवा दिया हो, तो हम कुछ कर भी नहीं सकते हैं। अगर वह जीवित है, तो मैं राजा से राजी कर लूँगा और मैं उसको 'काँसे का किले' का रास्ता दिखाऊँगा।" बूढ़े ने कहा।

"काँसे का किला?" चन्द्रवर्मा ने अपना आश्चर्य प्रकट किया। "आप जिस

काँसे के किले के बारे में कह रहे हैं, मैं छुटपन में बड़ों के मुँह उसके बारे में सुना करता था। वे कहा करते थे कि यह काँसे का किला कहीं पश्चिम में समुद्र के किनारे था। और जिस किसी को उसका रास्ता पता लगता यह जीवित नहीं रहता। यह जानकर कि "काँसे के किले" तक पहुँचनेवाले रास्ते का नक्शा आपके पास है, मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"हाँ! आश्चर्य की बात है।" कुछ देर सिर झुकाकर, बूढ़ा कुछ सोचता रहा। फिर सिर उठाकर चन्द्रवर्मा की आँखों से आँखें मिलाकर उसने कहा-"यह तो तुम जानते ही हो, काँसे का किला कहाँ है, यह जानने के लिए बहुतों ने कोशिश की और बहुत से लोग मारे गये?"

"हाँ, हाँ, ऐसा बड़ों के मुख से सुना था।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा का उत्तर सुनते ही बूढ़े ने हँसकर कहा-"मुझे सन्देह हो रहा है कि तुम काँसे के किले के बारे में सब कुछ जानते हो। मेरे पास काँसे के किले के रास्ते का नक्शा है। उसे हमारे किसी पूर्वज ने पाया था। उसके बारे में रुद्रपुर के राजा



शिवसिंह को भी मालूम हुआ। उसने मुझे पकड़ने के लिए अपने सैनिक भेजे, मैं उनसे बचकर यहाँ भाग आया। मेरा लड़का देव, उनके हाथों में आ गया।

काँसे के किले में रखे हजारों रत्न-राशियों में मुझे हिस्सा दिया गया, तो मैं राजा को नक्शा देने के लिए तैयार हूँ। इसके लिए तुम्हे हम दोनों के बीच बँटवारा करना होगा। देव को छुड़वाना होगा, यदि तुम मेरी इस विषय में मदद कर सके तो मैं अपने हिस्से में से तुम्हें भी कुछ दूँगा।

उस धन से तुम सेना एकत्रित करके, फिर अपने राज्य को जीत सकोगे।" बूढ़े ने कहा।

बूढ़े की बात सुनकर, चन्द्रवर्मा जान गया कि वह कोई मामूली आदमी न था। चालबाजी में वह बहुत चालाक मालूम होता था।

"मैं आपकी शर्त मानने के लिए तैयार हूँ। मुझे दिखाइये, काँसे का किले के रास्ते का नक्शा कहाँ है।" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

बूढ़ा खुश होकर, चन्द्रवर्मा की ओर देखकर जवाब देनेवाला था कि बाहर से कुछ आहट आती मालूम हुई। बूढ़ा दरवाजा के पास गया। बाहर झाँककर देखा। फिर उसने कहा-"देखो, राज- सैनिक आ रहे हैं। यदि उन्होंने वचन दिया कि मेरे लड़के का वे कुछ न बिगाड़ेंगे, तो मैं उनसे मिलने के लिये तैयार हूँ। काँसे के किले में से, मुझे क्या हिस्सा देने के लिये वे तैयार हैं, इस बारे में भी उनसे बातचीत करना। उनका वचन ले लेना।" कहकर वह बाहर भाग गया और जङ्गल में कहीं जाकर छुप गया।

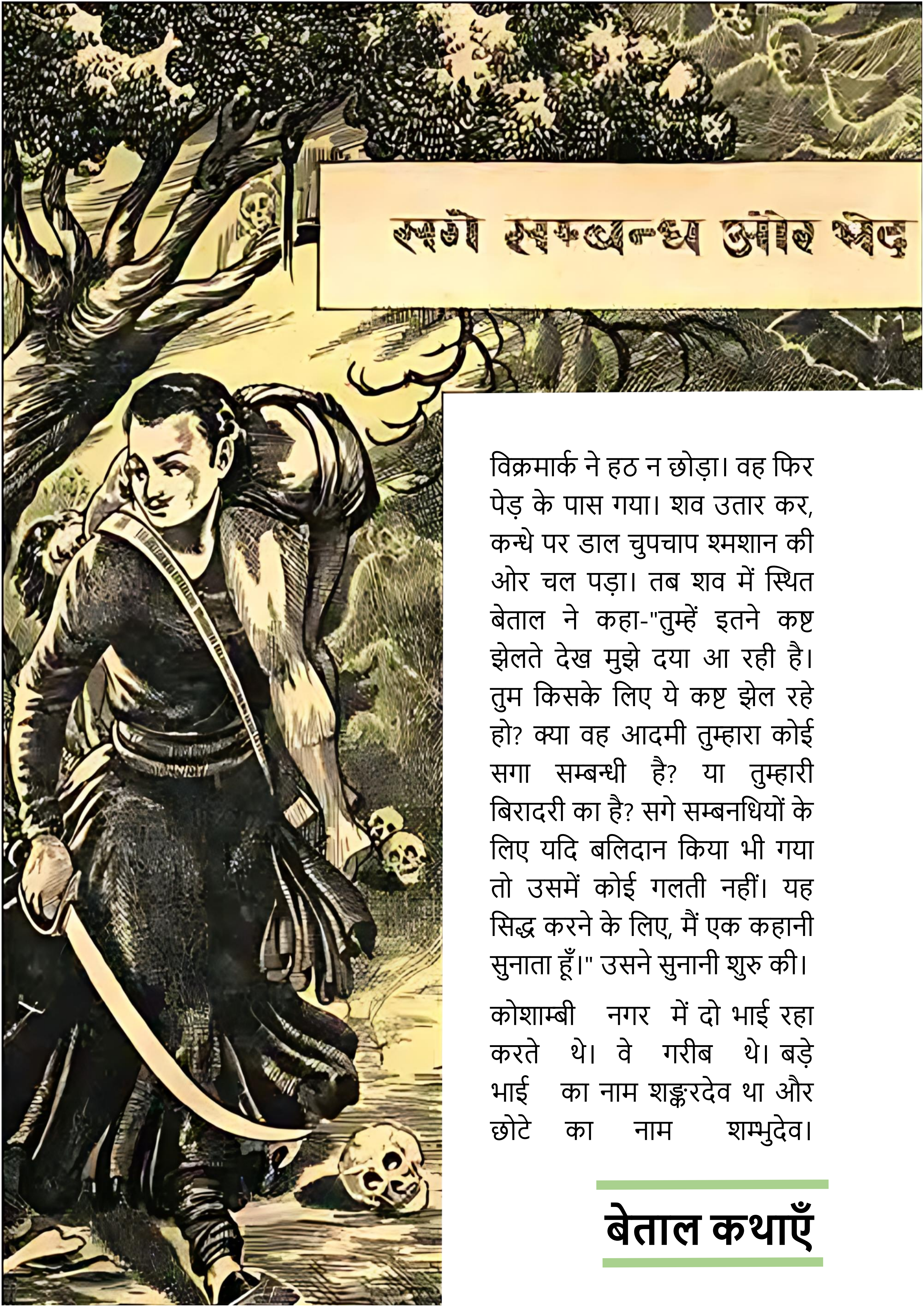
पल भर में इतनी बात का हो जाना देख, चन्द्रवर्मा को अचरज हुआ। बूढ़ा चालाक था। उसे आफत में डालकर स्वयं जङ्गल में भाग गया था। अब मुझे क्या करना होगा!

चन्द्रवर्मा अभी सोच ही रहा था कि क्या करे कि तलवार, कटार लिए सैनिकों ने उसको चारों ओर से घेर लिया।

"अन्दर जो कोई है, बाहर आओ। भागने के कोशिश की तो भाले के शिकार होगे।" सैनिकों ने कहा। चन्द्रवर्मा, निर्भय हो झोंपड़ी से बाहर आया।

(अभी है)





विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। शव उतार कर, कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"तुम्हें इतने कष्ट झेलते देख मुझे दया आ रही है। तुम किसके लिए ये कष्ट झेल रहे हो? क्या वह आदमी तुम्हारा कोई सगा सम्बन्धी है? या तुम्हारी बिरादरी का है? सगे सम्बनधियों के लिए यदि बलिदान किया भी गया तो उसमें कोई गलती नहीं। यह सिद्ध करने के लिए, मैं एक कहानी सुनाता हूँ।" उसने सुनानी शुरु की।

कोशाम्बी नगर में दो भाई रहा करते थे। वे गरीब थे। बड़े भाई का नाम शङ्करदेव था और छोटे का नाम शम्भुदेव।

दोनों अमीरों के घर नौकरी कर जिन्दगी बसर कर रहे थे।

शङ्कर जिस रईस के घर काम किया करता था, उस रईस का एक ही लड़का था। वह भी शङ्कर का समवयस्क था। दोनों शक्ल-सूरत से भाई लगते थे। कुछ दिनों बाद, दुर्भाग्य से रईस का लड़का मर गया। रईस शङ्कर को देखकर अपने को सान्त्वना दिया करता।

तब से, नौकर की तरह न जीकर, उनके घर के लड़के की तरह वह बड़ा होने लगा। उसे किसी चीज़ की कमी न थी।

रईस की सम्पत्ति में भी उसको आधा हिस्सा मिला। वह खूब पढ़ा लिखा भी। उज्जयनी राजा के यहाँ उसको बाद में नौकरी भी मिल गई। वह बड़ा हो गया।

परन्तु शम्भु वहीं नौकर रहा। वह कभी अपने कष्टों को याद न करता। भाई का बड़प्पन देखकर खुश रहा करता। अगर कोई सुननेवाला मिल जाता, तो भाई की प्रशंसा करते करते न अघाता।

"क्या तुम्हारा भाई कभी तुम्हें देखने आता है?" अगर कभी कोई पूछता तो वह कहा करता- "अरे भाई, भाई को कितने



ही काम रहते हैं। राजा की नौकरी है, जब जहाँ राजा भेजता है, वहाँ जाना पड़ता है। जब बड़े लोग घर आते हैं, तो उनसे राज्य-कार्य के बारे में बातें करनी होती हैं। उसे कहाँ फुरसत है? तीन साल पहले जब यहाँ आया था तो मुझसे मिलकर गया था।"

"क्या कभी तुम्हारा भाई तुम्हारे लिये पैसे भेजता है?" यदि कोई पूछता तो वह कहा करता-"जितनी आय उतने खर्च। फिर मुझ जैसे को पैसे की ज़रूरत ही क्या है? जो कुछ मुझे चाहिए, वह मेरा मालिक मुझे दे ही देता है।"

कई उसका आतृभाव देखकर खुश होते, तो कई उसको पागल समझ कर उसका मजाक करते।

इस तरह बहुत समय बीत गया। शम्भु बड़ा हो गया, विवाह के लायक हो गया। उसके योग्य लड़की भी मिल गई। कोशाम्बी नगर में एक सम्पन्न स्त्री थी, जिसका नाम मालती था। उसकी लक्ष्मी नाम की नौकरानी थी। लक्ष्मी का शम्भु से परिचय हो गया। दोनों ने शादी करने का निश्चय किया।

गरीबों की शादियाँ आसानी से नहीं हो जातीं। शम्भु के मालिक और लक्ष्मी की



मालकिन को उनकी शादी पर राजी होने के लिए पूरा एक साल लग गया।

यह बात जब औरों को मालूम हुई सब खुश हुए। शम्भु को तब तक तसल्ली न होती जब तक उसका भाई भी लक्ष्मी से उसकी शादी मञ्जूर न करता। उसने भाई के पास खबर भिजवाई।

खबर मिलने के कुछ दिनों बाद, शङ्कर कोशाम्बी नगर आया। परन्तु वह उस घर में नहीं ठहरा, जहाँ उसका भाई काम किया करता था। वह अतिथिगृह में ठहरा और उसने भाई के पास खबर भिजवाई कि वह अच्छे कपड़े पहनकर उससे मिलने आये।

शम्भु, भाई के कथनानुसार उससे मिलने गया। उसने लक्ष्मी का वर्णन करते हुये कहा-"भाई, अच्छा हो, यदि तुम भी लक्ष्मी से मिलकर अपनी राय बताओ। सब कह रहे हैं कि हम दोनों की जोड़ी अच्छी रहेगी, पर मैं यह बात तुम्हारे मुख सुनना चाहता हूँ, तभी मुझे तसल्ली होगी। लक्ष्मी को कहला भेज रहा हूँ कि वह आज आकर तुम्हें दिखाई दे।"



शङ्कर इसके लिए मान गया। उस दिन शाम को लक्ष्मी, अपनी मालकिन मालती को लेकर अतिथिगृह आई। मालती बहुत सुन्दर थी। उसको देखते ही शङ्कर दीवाना-सा हो गया। उसने उसको अपने ओहदे-हैसियत के बारे में बताया। मालती ने जाते जाते उसको घर आने के लिए कहा। अगले दिन सवेरे शङ्कर उसके घर गया। मालती के पिता से उसने कहा कि वह उससे विवाह करना चाहता था। मालती का पिता विवाह के लिए मान गया।

इसके बाद, शाम को, शम्भु ने खुशी खुशी आकर शङ्कर से पूछा-"भैया, क्या लक्ष्मी को देखा? कैसी है?"

"अरे तुमने कभी न बताया कि लक्ष्मी की मालकिन इतनी सुन्दर है?" शङ्कर ने अपने भाई से पूछा।

"जाने क्यों, मैंने उनका मुँह कभी न देखा। बताओ भी कि लक्ष्मी तुम्हें भायी कि नहीं?" शम्भु ने पूछा।

"तुम बुरा न मानना। मैं लक्ष्मी को देखना ही भूल गया। कुछ भी हो, तुम अब लक्ष्मी से विवाह नहीं कर सकते;



क्योंकि मेरा विवाह मालती से निश्चित हो गया है। और मालती के साथ लक्ष्मी भी उज्जयनी चली आयेगी। यदि तुमने लक्ष्मी से विवाह किया तो हमारे घर ही नौकर की तरह रहना होगा। यह अच्छा न होगा। इसलिए तुम किसी और लड़की से शादी कर लो। इस शहर में बहुत-सी नौकरानियों हैं।" शङ्कर ने कहा। भाई की बातें सुनकर शम्भु खड़ा खड़ा दह-सा गया।

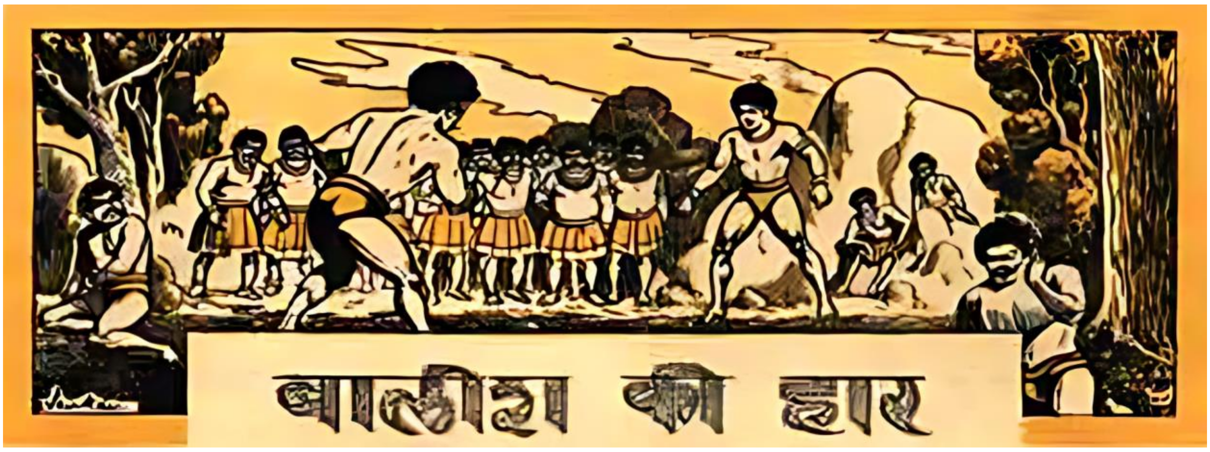
बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"शङ्कर और शम्भु सगे भाई थे। पर जीवन ने दोनों में भेद पैदा कर दिया। उस हालत में, क्या शम्भु को सगे भ्रातृत्व के लिए अपने प्रेम का बलिदान कर देना चाहिए था? नहीं तो क्या भाई को किसी और बिरादरी का सदस्य समझकर, उसको अपना स्वार्थ देखना चाहिए था? अगर तुमने इन प्रश्नों के उत्तर जानबूझकर न दिया, तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"सगा-सम्बन्ध जन्म से होता है। भेद जीवन के भिन्न-भिन्न स्तरों पर पैदा होते हैं। शङ्कर ने सोचा कि उन दोनों के भाई होने के कारण ही, शम्भु का सुख, उस के सुख में अड़चन पैदा कर रहा था। क्योंकि वे दोनों दो भिन्न-भिन्न वर्गों के थे इसलिए एक ने मालकिन से प्रेम किया, तो दूसरे ने नौकरानी से। इसलिए शम्भु के लिए जरूरी नहीं है कि वह उन कर्तव्यों का पालन करे, जो सगे सम्बन्ध के कारण पैदा होते हैं। वह अपनी भाभी की नौकरानी से विवाह कर सकता है।"

राजा का इस प्रकार मौन-भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया, और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





दण्डकारण्य में कभी मारीच नाम की घाटी थी। उस घाटी में टीले थे। एक एक टीले पर एक एक राक्षस ने अपना घर बना रखा था। राक्षसों में जो सब से अधिक बलवान होता, वही उनका सरदार हुआ करता। राक्षस प्राय: मिल-जुलकर रहा करते, पर कभी कभी ऐसा भी होता कि कोई जवान राक्षस अपने को बहुत बलवान समझता, दूसरों को ललकारता और उनको जीतता, जीतकर कभी कभी सरदार भी बन जाता। बालीश नाम का राक्षस बहुत बलवान था। वह मारीच घाटी के राक्षसों को एक एक करके युद्ध के लिए ललकारने लगा।

"हम सब को हराने में क्या रखा है? उस बड़े टीले पर रहनेवाले शतबाहु को हराओ।" राक्षसों ने बालीश से कहा।

"कभी मौका मिलेगा तो उनके दर्शन भी करूँगा।" बालीश उनसे कहा करता।

इसी तरह शतबाहु से भी राक्षस कहा करते-"कभी तुमसे भी बालीश कलई मिलायेगा। उसको जीतना कोई आसान काम नहीं है।"

"मैं भी बालीश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" शतबाहु ने कहा। पर उसे भय था कि कहीं बालीश उसे हरा न दे। मारीच घाटी के एक सिरे पर बालीश का घर था और दूसरे सिरे पर शतबाहु का, इसलिए दोनों के मिलने में बहुत दिन नहीं लगे।

एक दिन शतबाहु और अन्य राक्षस दो पहाड़ों में बीच में बड़े बड़े पत्थरों से रास्ता बना रहे थे। शतबाहु को सन्देह हुआ कि बालीश उससे बल आजमाने के



लिए वहाँ आ रहा था। उसने अपने हाथ का पत्थर फेंकते हुये कहा-"मैं घर जाकर पत्नी की क्या हालत हैं, देखकर अभी आता हूँ।" वह घर की ओर चला। जाते जाते उसने रास्ते के पासवाले एक पेड़ को उखाड़ फेंका। जड़ें और टहनियाँ निकाल फेंकी और उसकी छड़ी बनाकर घर चल पड़ा।

शतबाहु की पत्नी, पहले उसको जल्दी घर आया देख खुश हुई, पर उसके मुँह पर कुछ उदासी, चिन्ता देख, उसने उसका कारण पूछा।

"और क्या कारण है! बस यही बालीश है। हर कोई उसके बारे में भयङ्कर बातें बता रहा है। अगर भूमि पर वह जोर से पैर पटके तो कहते हैं कि भूचाल आ जाता है। वह बिजली को दो हाथों के बीच दबाकर, पापड़-सा बना" शतबाहु ने अपना अंगूठा मुख में रखा क्योंकि उसकी सारी शक्ति उसी अंगुली में थी। उसको मुख में रखने से उसे पता लग जाता था कि कहाँ क्या क्या हो रहा था।

"क्या पता लगा?" शतबाहु की पत्नी ने पूछा।

"वह अब हमारे घर आ रहा है। कल दुपहर तक वह यहाँ पहुँच जायेगा।" शतबाहु ने कहा।

"कोई बात नहीं। उसकी खबर मैं लूँगी। तुम न डरो।" पत्नी ने कहा। वह उस दिन शाम को, अड़ोस-पड़ोस के घरों में जाकर बहुत से लोहे के तवे माँग लाई। अपने अतिथि के लिए दो मन आटा भी गुदवाकर तैयार करवा दिया।

बालीश के आने के समय उसने अपने पति को एक नाँद में छुपा दिया और उस

पर कपड़े डाल दिये। फिर तवों को बीच में रखकर, उनके ऊपर और नीचे, वह रोटियाँ सेंकने लगी।

इतने में बालीश आया। "इस घर का भला हो। क्या शतबाहु का घर यही है?" उसने पूछा।

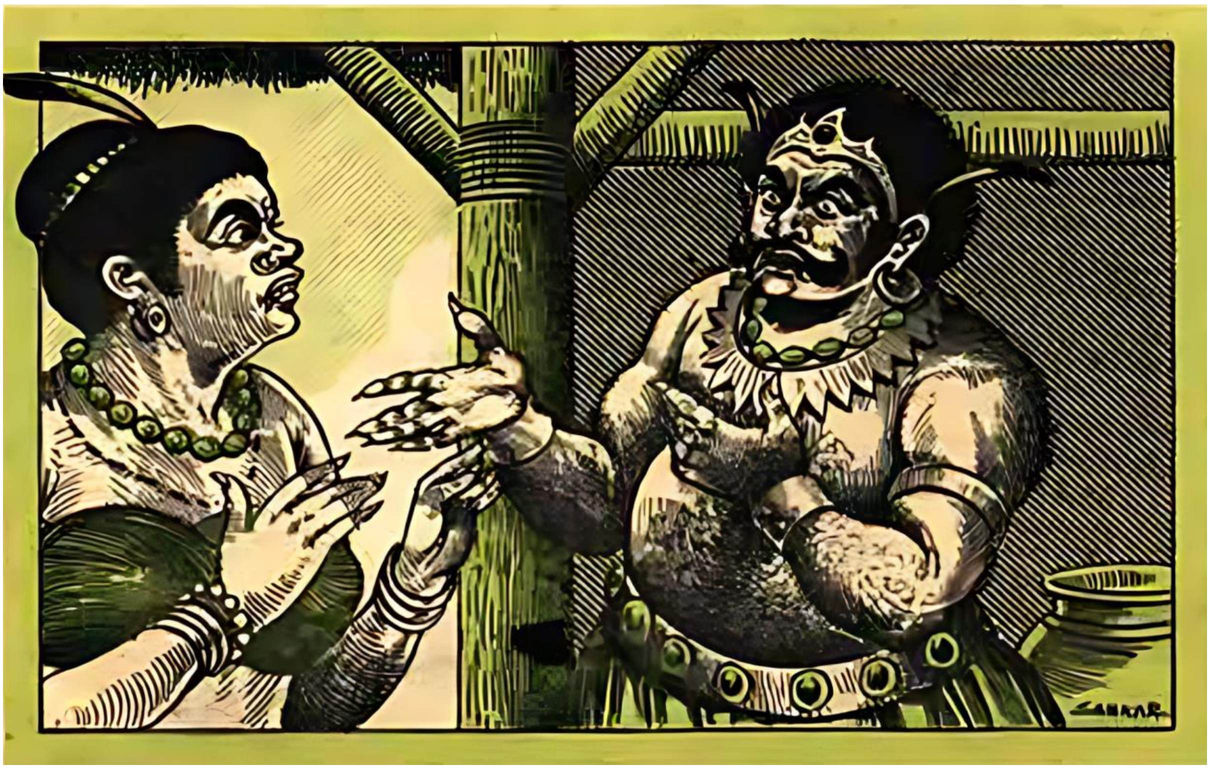
"हाँ, बेटा, बैठो! तुम जाने कौन हो, ऐसे समय आये हो, जब कि वे घर में नहीं हैं। यह जानकर कि बालीश नाम का कोई घमण्डी उनसे मुकाबला करने आ रहा है वे, कूदते-फाँदते पहाड़ पर गये हैं, जहाँ सब रास्ता बना रहे हैं। आज उसका वे काम तमाम कर देंगे।" शतबाहु की पत्नी ने कहा।

"हूँ, हूँ! मैं ही वह बालीश हूँ।" साल भर से देख रहा हूँ कि हममें से कौन जीतता है?" बालीश ने कहा।

"क्या तुम उनकी शक्ल-सूरत जानते हो?" बालीश ने पूछा।

"कैसे जानें? वह तो कभी मेरे सामने ही नहीं आता।" बालीश ने कहा।

"अब तक यानि किस्मतवाले हो। देखो, बेटा! हवा सामने से बहुत आ रही है। क्या घर को जरा घुमा दोगे? अगर



वे होते तो यही करते।" शतबाहु की पत्नी ने कहा।

यह सुन, बालीश को अन्दर ही अन्दर अचरज हुआ पर उसने यह बाहर व्यक्त नहीं किया। वह उठकर बाहर गया; अपने दायें हाथ की बीच की अंगुली चटका कर, दोनों हाथों से घर को पकड़कर, एक तरफ़ मोड़ दिया। बालीश की शक्ति उसके दाँये हाथ की बीच की अंगुली में थी।

बालीश को अपना घर घुमाता देख शतबाहु भय के कारण पसीना पसीना हो गया। परन्तु उसकी पत्नी ने तनिक भी आश्चर्य न दिखाया-

"वाह खूब, उसी हाथ से, जरा पिछवाड़े का पहाड़ तोड़ दो, और एक कुँआ बना दो। मेरे पति, कुँआ बनाने के लिए पहाड़ फाड़ ही रहे थे कि किसी ने आकर तुम्हारे बारे में कहा। तेरा नाम सुनते ही वे आग बबूला हो उठे और झट चले गये और अब घर में पीने के लिए भी पानी नहीं है।"

बालीश उसके साथ पिछवाड़े में गया और चट्टानें देखी। वह सौ फीट ऊँची चट्टान थी। पर बालीश न घबराया। अपने दाँये हाथ की अंगुली चटका कर



उसने उस पहाड़ के दो टुकड़े कर दिये। और पहाड़ के टूटने से वहाँ एक नाला भी तैयार हो गया।

"बड़ी मेहनत की है। आओ थोड़ा खाना खिलाती हूँ। क्या खाना है हमारा? बहुत ही रूखा सूखा है। मैं उनके लिए रोटियाँ बना रही हूँ। जितनी रोटियाँ तुम चाहो खाओ। उनके आने तक मैं और रोटियाँ बना दूँगी।" शतबाहु की पत्नी ने कहा। उसने बालीश को सामने बिठाकर दस रोटियों को, एक के ऊपर एक सामने रखा।

बालीश ने ऊपर की रोटी उठाकर काटी। तुरत उसके दो दान्त टूट गये। बह जोर से चिल्लाने लगा।

"छी छी, यह क्या रोटी है? मेरे दान्त टूट गये हैं।" बालीश ने कहा।

"यह क्या कह रहे हो? ये रोटियाँ वही हैं, जो रोज मेरे पति खाये करते हैं। पहले ही बता दिया था कि हमारा जरा रूखा सूखा खाना है। और तो और इन रोटियों को नाँद में पड़ा वह लड़का भी खाता है।" शतबाहु की पत्नी ने कहा।



बालीश को जोश आ गया। उसने एक रोटी और ली और उसे चबाना चाहा। उसके दो दान्त और टूट गये। "छी छी, यह क्या खाना है? मुझे नहीं चाहिए।"

"अगर तुम में इन रोटियों को खाने की ताकत न हो, तो न खाओ। पर शोर न करो। सोता लड़का उठ जायेगा। देखो, वह उठ भी गया।" शतबाहु की पत्नी ने कहा।

इस बीच शतबाहु कुछ रोया भी। छोटे बच्चे की उतनी बड़ी आवाज सुनकर, बालीश अचम्भे में पड़ गया। शतबाहु की पत्नी, भट्टी के पास से उठी और पति को मामूली तौर पर बनाई हुई रोटी दे आई। उसको जल्दी जल्दी रोटी खाता देख बालीश ने सोचा-"गनीमत हुई कि मैं तब न आया, जब शतबाहु यहाँ था।" भय के कारण उसके पैर काँपने लगे।

"अगर शतबाहु आये तो कहना कि वे मुझे माफ कर दें। वे कहाँ और मैं कहाँ? मुझे अक्ल आ गई है।" उसने शतबाहु की पत्नी से कहा।

इन लोगों की नस्ल ही कुछ और है। अगर तुमने मेरे लड़के के दान्त देखे, तो तुम ही जान जाओगे। अच्छा, बेटा जरा मुँह खोलकर अपने दान्त तो मामा को दिखाओ।" शतबाहु की पत्नी ने कहा।

बालीश धोखे में आ गया। उसने दायें हाथ की अंगुलियों से शतबाहु के मुख को देखा। मौन देख कर शतबाहु ने उसके बीच की अंगुली काट ली। उस अंगुली के साथ बालीश की सब शक्तियाँ चली गईं और वह मामूली आदमी हो गया। उसके बाद, राक्षसों में कोई ऐसा न था कि जो शतबाहु से मुकाबला कर सके।





डेनमार्क के राजा का एक लड़का था; जिसका नाम हेमलेट था, और एक भाई था, जिसका नाम क्लाडियस था।

राजा बहुत ही उदार, पराक्रमशाली व धर्मात्मा था। पर उसका भाई क्लाडियस बहुत नीच था। दुष्ट था।

एक दिन राजा जब बगीचे में लेटा हुआ था तब क्लाडियस ने जाकर उसके कान में जहर डाल दिया। उस जहर के कारण राजा मर गया। क्लाडियस ने यह घोषित करवा दिया कि साँप के काटने से उसका भाई मर गया था। सबने उसका विश्वास भी कर लिया।

परम्परा के अनुसार क्लाडियस का राज्याभिषेक हुआ। क्लाडियस ने केवल राज्य के लिए ही अपने भाई की हत्या न की थी, वह अपनी भाभी से शादी भी करना चाहता था। उसकी यह इच्छा भी पूरी हुई। पति के मरे अभी दो महीने भी न हुए थे कि रानी अपने देवर से शादी करके रानी बनी रही।

तब तक हेमलेट सयाना हो चुका था। वह पितृशोक में तड़प रहा था, और उसकी माता नये विवाह में खुश थी, यह देख उसका मन जला जा रहा था। हेमलेट को अपने माँ-बाप से बहुत प्रेम था। उन पर उसे अभिमान था। वह यह अनुमान न कर सका कि उसकी माँ, जो एक योग्य व्यक्ति की पत्नी थी, कैसे इस दुष्ट की पत्नी होने के लिए मान गई थी। उसने अपने मित्र, होरेशिया से यह कहा भी।

इस बीच हेमलेट को एक विचित्र बात मालूम हुई। किले की ड्योढ़ी पर पहरेदारों



को, दो दिन, आधी रात के बाद, मृत राजा दिखाई दिया। यह सुन, होरेशियो, तीसरे दिन स्वयं पहरेदारों के साथ पहरे पर बैठा। भूत दिखाई दिया। होरेशियो ने भूत से बातचीत करनी चाही, पर वह बिना बात किये ही चला गया।

होरेशियो ने यह हेमलेट से कहा। चौथे दिन रात को हेमलेट अपने दोस्त के साथ ड्योढ़ी पर गया। आधी रात के समय फिर भूत आया। उसने हेमलेट को अपने साथ आने के लिए कहा। मित्रों के और पहरेदारों के बहुत मना करने पर भी हेमलेट भूत के साथ चला गया।

भूत, युवराजा को एक एकान्त स्थल पर ले गया-"बेटा, मैं तुम्हारा पिता हूँ। सब सोच रहे हैं कि मैं जब बाग में सोया हुआ था तब मुझे साँप ने काटा था। वह साँप जिसने मुझे काटा था, वह अब मेरे सिंहासन पर बैठा हुआ है। तुम्हारे नीच चाचा ने मेरे कान में जहर डालकर मेरी हत्या ही नहीं की बल्कि तेरी माता से शादी भी कर ली। तुम अपनी माँ से कुछ न कहना। वह अपना किया भुगतेगी।" – यह कहकर वह भूत अदृश्य हो गया।

यह जानते ही हेमलेट का दिल टूट सा गया। उसने निश्चय किया कि जब तक वह अपने चाचा से बदला नहीं ले लेगा तब तक वह पागल की भाँति रहेगा। उसने यह अपने मित्र से भी कहा। होरेशियो और पहरेदारों से उसने यह भी प्रतिज्ञा करवाई कि वे किसी से न कहेंगे कि उसके पिता का भूत दिखाई दिया था।

उसके बाद जब वह किसी से बात करता तो यह दिखाता जैसे उसका दिमाग

बिगड़ गया हो। पोलिनियस नाम के मन्त्री की, ओफीलिया नाम की लड़की थी। हेमलेट उससे बहुत प्रेम किया करता था। उनकी शादी भी होनेवाली थी। पर अब वह ओफीलिया के सामने भी पागल का सा व्यवहार कर रहा था।

क्लाडियस यह न जान सका कि हेमलेट का दिमाग क्यों बिगड़ गया था। पर उसे विश्वास न था कि केवल पिता की मृत्यु के कारण ही उसकी यह हालत थी। उसने हेमलेट के पास दो आदमियों को यह जानने के लिए भेजा क्यों उसकी यह हालत हो गई थी।

हेमलेट के "पागल" हो जाने से उसकी माता बहुत चिन्तित थी। वह भी उसके पागलपन का कारण न समझ पायी थी। पोलिनियस ने कहा-"युवराज के पागलपन का क्या कारण है, यह में भलीभाँति जानता हूँ। उन्होंने मेरी लड़की से प्रेम किया था। वह प्रेम अब पागलपन हो गया है और कुछ नहीं है।"

यह सुन रानी ने खुश होकर कहा- "यदि यही है, तो चिन्ता की कोई बात नहीं है।" अपनी बात सिद्ध



करने के लिए पोलिनियस ने एक जगह राजा और रानी को रखा और हेमलेट और ओफीलिया के मिलन की व्यवस्था की। हेमलेट ने ओफीलिया से पागल की तरह ही बातचीत की। उनकी बातचीत सुनकर क्लाडियस ताड़ गया कि उसको पागलपन नहीं था। क्लाडियस के आदमी भी न जान सके कि हेमलेट क्यों "पागल" हो गया था।

उस समय राजमहल में नाटक खेलनेवाले कुछ आदमी आये। उन्होंने पहले भी एक नाटक खेला था। हेमलेट उनको

अच्छी तरह जानता था। अब उन्हें देखते ही उसको एक चाल सूझी। उसने उन लोगों के द्वारा यह जानना चाहा कि सचमुच उसके चाचा ने पिता की हत्या की थी कि नहीं। भूत ने जो कुछ उससे कहा था, वह सच हो सकता था और झूठ भी। भूत कोई भी रूप धारण कर सकते हैं। वह भूत उसके पिता का ही था, यह निर्धारित करने के लिए हेमलेट के पास आवश्यक प्रमाण न थे। हेमलेट ने सोचा कि यदि उसे और भी गवाही मिल गई, जिससे यह साबित हो कि उसका चाचा ही पिता का हत्यारा था, तो निश्चित ही उससे बदला लिया जा सकता था।

उसने नाटकवालों से एकान्त में मिलकर पूछा-"क्या तुम फलाना नाटक खेल सकते हो?" उस नाटक में भी एक दुष्ट एक राजा को मारकर उसकी पत्नी से शादी करता था। उस नाटक में थोड़ा-सा परिवर्तन कर देने से, वह उसके माता-पिता की कहानी हो सकती थी। नाटकवाले उसके सुझाये हुये परिवर्तनों के साथ नाटक खेलने के लिए तैयार हो गये।



नाटक देखने के लिए राजा, रानी, पोलिनियस, ओफीलिया आदि आये। हेमलेट ऐसी जगह बैठा जहाँ से वह अपने चाचा का मुँह आसानी से देख सकता था। नाटक प्रारम्भ हुआ। पहले दृश्य में राजा और रानी रङ्गमञ्च पर आये। सम्भाषण में रानी ने राजा से कहा कि वह उससे बहुत प्रेम करती थी; उसकी मृत्यु के बाद वह किसी और से विवाह न करेगी। यह सुनते ही क्लाडियस का मुँह ऐसा बिगड़ा जैसे कोई कड़वी दवा पी ली हो। फिर रानी रङ्गमञ्च पर से चली गई।

राजा आराम करने के लिए लेट गया। एक हत्यारा आया। उसने राजा के कान में विष डाल दिया।

यह देखते ही क्लाडियस खौल उठा। वह चिल्लाया-"मशालें कहाँ हैं? मुझे जाना है।" वह चला गया। नाटक बीच में ही रोक दिया गया।

परन्तु हेमलेट को आवश्यक प्रमाण मिल गये। चाचा सचमुच हत्यारा था। भूत की बात में लेशमात्र भी असत्य न था। वह इस बड़े भेद को खोलने ही वाला था कि पोलिनियस ने आकर कहा-





कि उसको, उसकी माता बुला रही थी। उसने हेमलेट को भेज दिया।

इतने में क्लाडियस ने सोचा कि हेमलेट का पागलपन उसके लिए खतरनाक था। अगर किसी तरह हेमलेट को न मार दिया गया तो उसके लिए खैर न थी। परन्तु यदि डेनमार्क में उसकी हत्या की गई, तो बहुत मुसीबतें आ पड़तीं। प्रजा को युवराज पर बहुत प्रेम और अभिमान था। अगर उसको किसी ने मार दिया, तो प्रजा में विद्रोह हो सकता था। अराजकता फैल सकती थी। रानी भी अपने लड़के पर जान देती थी। इसलिए क्लाडियस ने सोचा कि हेमलेट को किसी बहाने अपने आदमियों के साथ इंग्लैण्ड भेजा जाये और वहाँ के सामन्त के द्वारा उसकी हत्या करवाई जाये।

पोलिनियस के चले जाने के बाद, हेमलेट अपनी माता को देखने उसके कमरे की ओर जा रहा था और इस बीच पोलिनियस ने राजा के पास जाकर कहा-"महाराज, युवराज रानी के कमरे में जा रहे हैं। मैं पहले ही वहाँ जाकर, वहाँ के परदों के पीछे छुप जाऊँगा। चोरी चोरी उनकी बातें सुनूँगा। मौका मिलने पर यह पता लगाने की कोशिश करूँगा कि उसके पागलपन का क्या कारण है?" वह राजा की अनुमति लेकर रानी के कमरे में गया। रानी की अनुमति लेकर वह परदों के पीछे खड़ा हो गया।

थोड़ी देर बाद हेमलेट ने कमरे में आकर पूछा-"माँ, क्यों बुलाया है?"

"कुछ नहीं, तुम अपने पिता को बहुत गुस्सा दिलवा रहे हो।" माता ने कहा।

पिता की हत्या करनेवाले को जब उसका पिता बताया गया तो उसका खून खौल उठा।

"पिताजी को तूने ही तो गुस्सा दिलवाया है।" उसने कहा।

"ऊटपटाङ्ग बकवास न करो।" माँ ने कहा।

"ऊटपटाङ्ग प्रश्न न करो।" लड़के ने कहा।

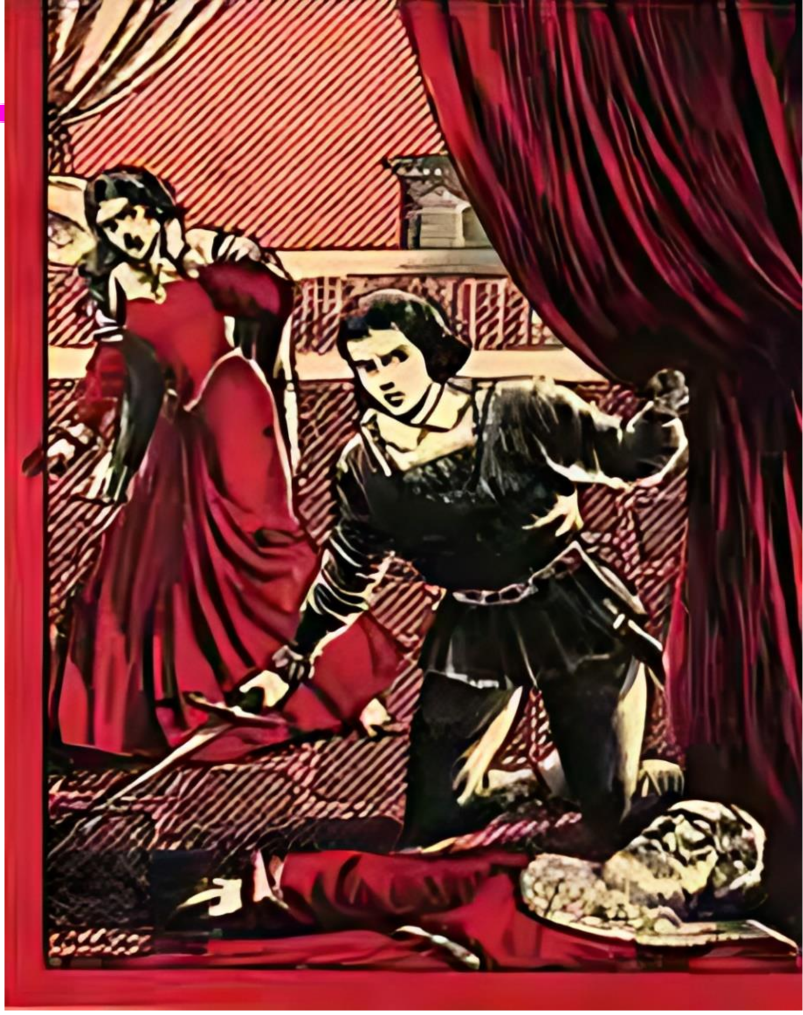
उसकी बातों का लहजा देख रानी चौंकी। "क्या तुम जानते हो, तुम किससे बात कर रहे हो?" उसने पूछा।

"तुम रानी हो। अपने पति के भाई की पत्नी हो। मेरी माँ हो। अगर तुम यह न होती तो बहुत अच्छा होता।" हेमलेट ने कहा।

"मुझे तुमसे बात नहीं करनी चाहिये।" कहकर, रानी अपने पति को बुलाने के लिए उठी। हेमलेट ने उसको रोककर पूछा-"यहाँ बिना हिले-डुले बैठो, तुम्हें शीशे में तुम्हारा मुँह दिखाऊँगा। उसके बाद चाहो तो चले जाना।"

रानी घबरा गई-"क्या तुम मुझे मार दोगे? कौन है वहाँ? मुझे बचाओ! बचाओ!" वह चिल्लाने लगी।

परदों के पीछे छुपा पोलिनियस भी "बचाओ! बचाओ!" चिल्लाने लगा।



"अरे चूहे! तुम यहाँ हो?" हेमलेट ने तलवार निकाल कर परदे में से, पोलिनियस को मारा। उस चोट के कारण पोलिनियस वहीं ठण्डा हो गया।

पहले हेमलेट ने सोचा कि उसने अपने चाचा को ही मारा था। परन्तु परदे के पीछे से जब शव खींचा गया, तो उसको असलियत मालूम होने पर शोक हुआ। परन्तु जो हो गया था, उस पर शोक करने से कोई फायदा न था। उसने माँ से अपने पिता की हत्या के बारे में कहा। और यह भी बताया कि वह भूत

के रूप में उसे दिखाई दिया था। उसने कहा-" तुम जो उस जैसे योग्य व्यक्ति की पत्नी थी, इस नीच की पत्नी कैसे बन गई? इस दुष्ट में और पिताजी में जमीन आसमान का फर्क है। कम से कम अब तो इसे दूर रखो। सच कहा जाय, तो मुझे कोई पागलपन नहीं है। जो कुछ गुजरा है, उस पर तुम पश्चात्ताप करो, तभी तुम्हें मैं वास्तविक माँ समझूँगा।" लड़के की बातें सुनकर रानी की आँखें खुलीं। उसने वचन दिया कि जैसा वह कहेगा, वैसा ही वह करेगा।

पागलपन में, हेमलेट ने पोलिनियस को मार दिया था, यह बहाना करके क्लाडियस ने उसको इंग्लैण्ड भिजवाने का प्रबन्ध किया। राजा के आदमी हेमलेट के जहाज में चढ़े। वे साथ जो पत्र ले जा रहे थे, उनको हेमलेट ने चोरी चोरी खोलकर पढ़ लिया। मालूम हो गया कि उसको मारने के लिए ही उसे इंग्लैण्ड भेजा जा रहा था। तुरन्त उसने वे पत्र बदल दिये। उनमें लिखा कि राजा के आदमियों की हत्या कर दी जाय। उसने अपने पिता की सील भी उन पर लगा दी और पत्रों को यथास्थान रख दिया।



अगले दिन समुद्री डाकुओं का एक जहाज उनका पीछा करता हुआ आया। जब दोनों जहाजों में लड़ाई हो रही थी तब हेमलेट समुद्री डाकुओं के जहाज में कूद गया। वे अपना जहाज लेकर भाग गये।

डाकुओं ने हेमलेट की अच्छी आवभगत की। उन्होंने फिर उसको वापस डेनमार्क के तट पर लाकर छोड़ दिया। उसने अपने चाचा को पत्र लिखा कि अगले दिन वह घर पहुँच रहा था।

इधर हेमलेट की प्रेयसी ओफीलिया पागल हो गई थी। जब उसको मालूम हुआ कि उसके पिता की हत्या कर दी गई थी और हत्या करनेवाला उसका प्रेमी ही था, तो उसको पागलपन चढ़ गया। वह कुछ दिन इधर-उधर के उटपटाङ्ग गीत गुनगुनाती घूमती फिरती रही। फिर एक नाले में गिरकर मर गई।

पोलिनियस का एक लड़का था, जिसका नाम लायेटिस था। वह पेरिस में पढ़ा करता था। पिता की मृत्यु का समाचार मिलते ही यह भागा भागा आया। थोड़े लोग भी उसके साथ हो गये और नारे लगाने लगे-"हम चाहते हैं कि लायेर्टिस हमारा राजा हो।"





इस समय लायेटिस अपनी बहन को पागल देख बहुत दुखी हुआ। उसके आने के बाद ही वह मरी।

राजा ने लायेर्टस से एकान्त में बातचीत की और उससे हेमलेट को मरवाने की ठानी।

"हेमलेट ने तुम्हारे पिता को मारा है। तुम जैसा पराक्रमी उससे बदला लिये बिना न रहेगा। हेमलेट आ रहा है। अगर किसी ने तुम्हारी तारीफ़ की कि तुम तलवार चलाने में बहुत निपुण हो, तो वह अपना बल, चातुर्य दिखाने के लिए उतावला हो जायेगा। तब तुम उससे अपना बदला ले सकोगे।" राजा ने मन्त्री के लड़के को सुझाया।

"मेरे पास एक बहुत जबर्दस्त जहर है। उसको यदि मैंने तलवार पर लगा दिया और किसी को उससे चोट की, तो उस चोट के कारण वह अवश्य मरकर रहेगा।"

"हमें यह सब इस तरह करना होगा ताकि किसी को किसी प्रकार का सन्देह न हो। एक प्रतियोगिता का प्रबन्ध करें। दोनों पक्ष बाजी लगायें। अगर इस में किसी कारण हेमलेट न मारा गया, तो उसको

इस झुण्ड को साथ लेकर वह राजमहल की ओर गया। राज-सैनिक उन्हें न रोक सके। वे फाटक तोड़कर अन्दर चले गये। उसने क्लाडियस से पूछा-"अरे नीच, मेरा पिता कहाँ है?"

राजा ने बड़ी समझबूझ से काम लिया। उसके गुस्से की परवाह न करके उसने उसे समझाया-"बेटा, यह गुस्सा जिस पर दिखाना चाहिए उसपर दिखाओ। पिता की मृत्यु से जिस प्रकार तुम शोक सन्तप्त हो उसी प्रकार मैं भी था।"

मारने के लिए एक प्रबन्ध करना होगा। इसके लिए मैं किसी पेय में विष मिलाकर तैयार रहूँगा।" राजा ने कहा।

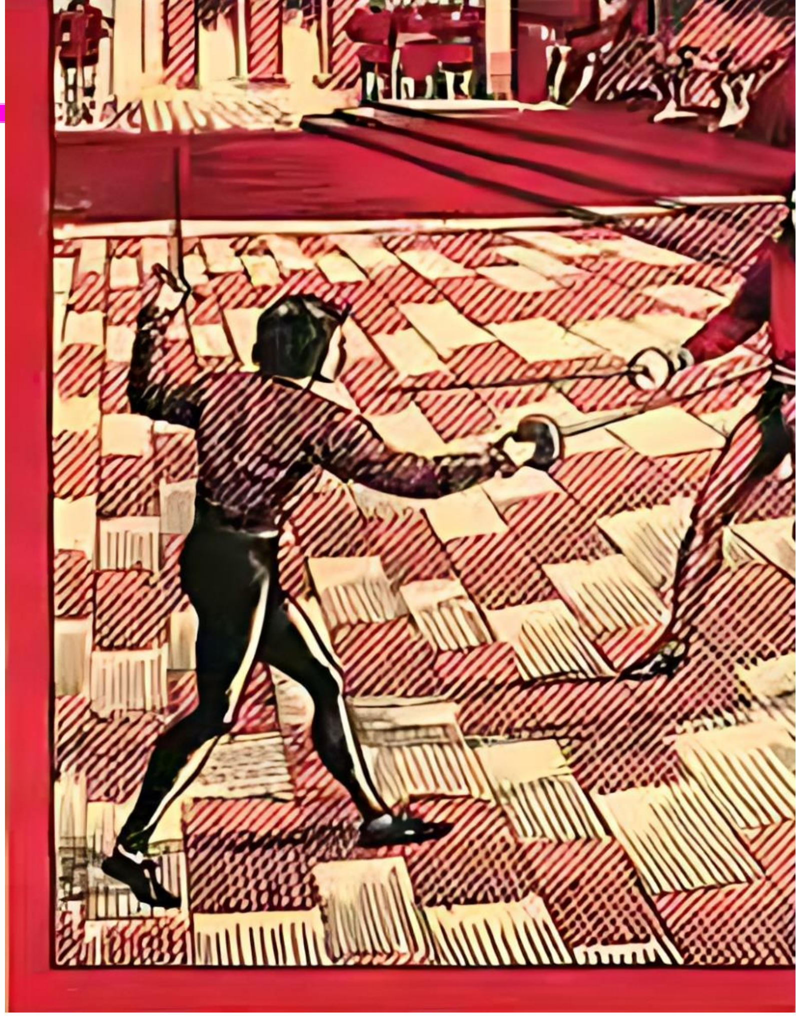
हेमलेट जब आया, तो कब्रिस्तान में, ओफीलिया को गाड़ने की तैयारियाँ हो रही थीं। हेमलेट और होरेशियो के कब्रिस्तान में पहुँचने के कुछ देर बाद, राजा, रानी, लायेटिस और पुरोहित वगैरह वहाँ आये।

पहले तो हेमलेट न जान सका कि वह शब किस का था। उसने छुपे छुपे सुना कि ओफीलिया मर गई थी, उसे आश्चर्य हुआ।

शव को गढ़े में उतारा गया। लायेटिस भी प्रेम के कारण गढ़े में उतरा। "मुझे भी गाड़ दो। मुझपर भी मिट्टी के ढेर लगा दो।" चिल्लाने लगा।

यह देख, हेमलेट सामने आया और गढ़े में कूद गया। दोनों झगड़ने लगे। बाकी लोगों ने आकर उनको छुड़वाया। गढ़े में से निकाला।

"चालीस हजार भाई भी ओफीलिया से उतना प्रेम नहीं करते, जितना कि मैं करता हूँ। यह दिखाने के लिए मैं युद्ध तक करने के लिए तैयार हूँ।" हेमलेट ने जोश में कहा।



फिर राजमहल में, राजा और रानी के समक्ष, हेमलेट और लायेटिस के द्वन्द्व युद्ध की व्यवस्था की गई। हेमलेट ने सोचा कि इसकी व्यवस्था मनोरञ्जनार्थ ही हुई थी। परन्तु लायेटिस की तलवार पर जहर लगा हुआ था। और ग्लास में जहर मिलाकर एक पेय हेमलेट के लिए तैयार था।

युद्ध में लगातार युवराज ने ही मन्त्री के लड़के को घायल किया। इस बीच रानी ने जहर से मिला वह पेय, जो हेमलेट के लिए तैयार किया गया था,

राजा के बहुत मना करने पर भी, लेकर पी लिया।

इतने में लायेटिस ने अपनी जहरवाली तलवार से हेमलेट को घायल किया। फिर जो वे आपस में भिड़े तो एक दूसरे की तलवार हाथ में आ गई। हेमलेट ने हाथ में आई हुई जहर की तलवार से लायेटिस को घायल किया।

तब तक रानी गिर चुकी थी।

"मैं अपने धोखे में खुद ही फँसा।" लायेटिस ने कहा।

"माँ, क्या हाल है?" हेमलेट ने पूछा।

"बेटा, हेमलेट! इस शरबत में जहर मिलाया गया है।" रानी यह कहती मर गई।

"सब दरवाज़े बन्द करके हत्यारे को पकड़ो!" हेमलेट चिल्लाया।

"हेमलेट! तुम भी अपने को मरा समझो। जहरवाली तलवार तुम्हारे हाथ में है। यह सब राजा की ही चाल है।" लायेटिस ने कहा।

"हत्यारे, पापी, मर!" चिल्लाते हुए हेमलेट ने जहरवाली तलवार से राजा को मारा।

"हेमलेट, मुझे माफ करो। उस दुष्ट की यही हालत होनी चाहिए। तुम मेरे पिता की मृत्यु और मेरी मृत्यु के लिए लिए जिम्मेवार नहीं हो। मैं तुम्हारी मृत्यु के लिए जिम्मेवार नहीं हूँ।" कहते हुये लायेटिस ने प्राण छोड़ दिये। तलवार की चोट के कारण हेमलेट और राजा भी मर गये।

क्लाडियस के लालच के कारण, जो हत्याकाण्ड प्रारम्भ हुआ था वह सर्वनाश में समाप्त हुआ।



मौत का डर

एक सुल्तान, अपने नौकर-चाकरों को लेकर एक नौका में भ्रमण करने नदी में निकला। नौका मझधार में थी कि हवा के झोके ने उसे झकझोर-सा दिया। नौका डोलने लगी। सुल्तान के एक नौकर ने भय से काँपते हुए नौका के मल्लाहों से कहा-"अरे भाई, जल्दी नाव को किनारे पर ले जाओ। में तैरना नहीं जानता। नदी में डूब जाऊँगा।" वह चिल्लाने लगा।

सुल्तान के और नौकरों ने उससे कहा कि घबराओ मत। पर वह रोता गया।

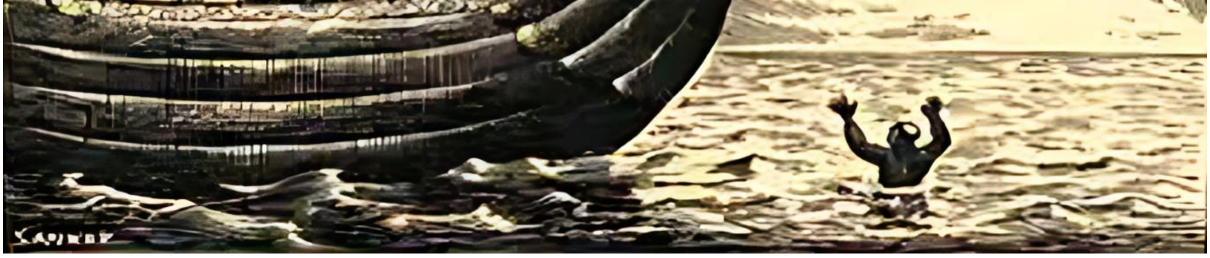
यह देख वज़ीर ने सुल्तान से कहा-"अगर आपका हुक्म हो, तो मैं इसका मौत का भय दूर कर दूँगा।"

सुल्तान ने कहा-" करो।"

वजीर के हुक्म पर, मल्लाहों ने, उस नौकर को लेकर नदी में फेंक दिया। तैरना तो आता नहीं था, जब कभी डूबकर वह ऊपर आता, चिल्लाता-"मैं डूब रहा हूँ, मुझे कश्ती में खींचो।" वज़ीर ने उसको नदी में से निकलवाया। वह ख़ुदा को दुआ देता एक कोने में बैठ गया।

तब सुल्तान ने वज़ीर से कहा-"यह क्या! यकायक इसका डर दूर हो गया है।"

वज़ीर ने हँसते हुए कहा-"हुजूर! जब तक कश्ती में यह रहा, इसने सोचा कि किनारे पर चले जाने में भला था। और अब जब एक बार पानी में डूब चुका है, तो सोच रहा है कि पानी से तो अच्छा कश्ती में ही रहना है।





अगले दिन, राज कुटुम्ब वाले बुद्ध को देख कर इतने खुश हुये कि उनके लिये भोजन तैयार करना ही भूल गये। उस दिन सवेरे बुद्ध दान्त साफ करके, मुख धोकर, एक एकान्त स्थल में ध्यानस्थ हो गये। भोजन के समय उठकर, अपना भिक्षा-पात्र लेकर वे भिक्षा स्वीकार करने के लिए निकल पड़े। नगर में उनको देख कर लोग जमा तो हो गये, पर यह न जान सके कि वे भिक्षा के लिए निकले थे। न वे यह जानते थे कि जिस घर के सामने बुद्ध खड़े होते थे उस घरवाले को उन्हें भिक्षा देनी चाहिये थी। इस परम्परा से वे अपरिचित थे। इसलिए, बुद्ध को कहीं भिक्षा न मिली।

बुद्ध घर घर के सामने खड़े होते राज महल पहुँचे। अन्तःपुर की स्त्रियाँ, उन्हें देखने के लिए, अन्तःपुर के छज्जों पर आ खड़ी हुई। यशोधरा ने पहले ही सुन रखा था कि उस शहर में, जहाँ वे रथ में घूमा करते थे, केश कटवाकर काषाय वस्त्र पहनकर, मिट्टी का पात्र लेकर भिक्षा माँगते घर घर घूम रहे थे। वे इस वेष में कैसे दीख पड़ते थे, यह देखने के लिए



वह भी एक छज्जे में आकर चुपचाप खड़ी हो गई।

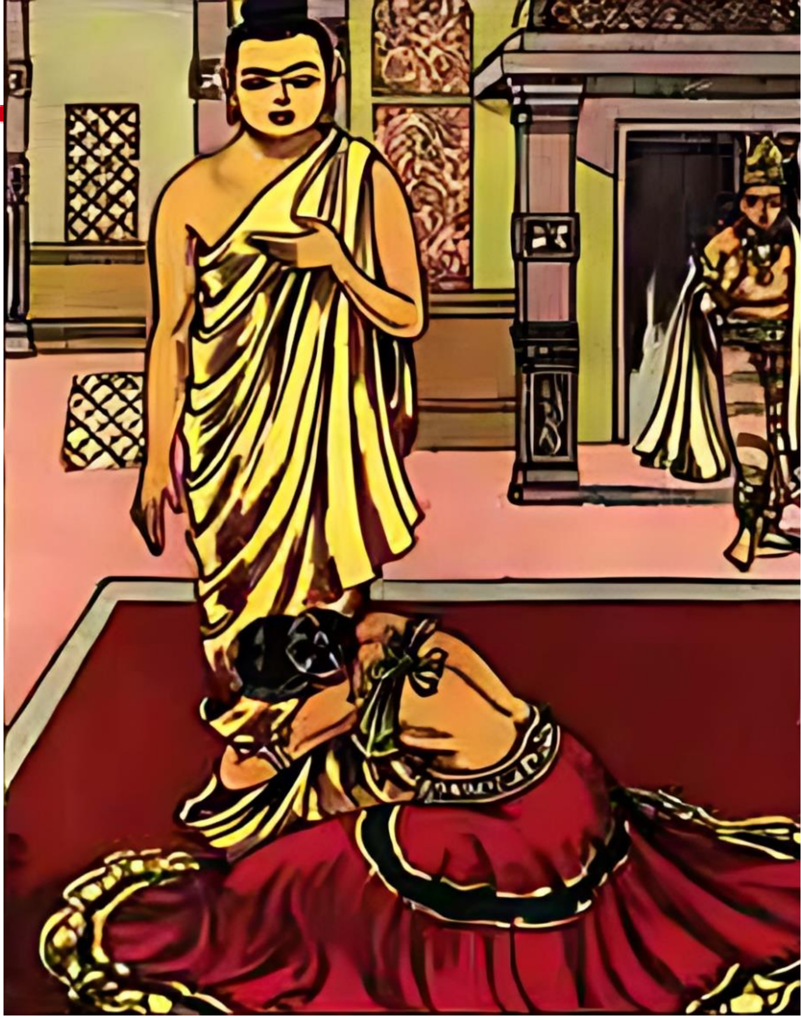
बुद्ध के आते ही, उसने मन ही मन, उनको प्रणाम किया। उसने सोचा- "राहुल के पैदा होते ही, राजपाट छोड़कर चले गये थे। क्या अब उससे बड़ा राज्य कहीं प्राप्त कर लिया है?" उसने अपने ससुर शुद्धोधन के पास जाकर कहा- "आपके लड़के घर घर भीख माँगते यहाँ भी आ रहे हैं।"

शुद्धोधन यह सुनते ही झुञ्झला उठा। भागा भागा बुद्ध के पास गया। "बेटा, अगर तुम्हारे साथ जम्बू द्वीप के सारे राजा, सपरिवार भी आयें, तो उन सब को मैं भोजन दे सकता हूँ। क्या तुम्हें और तुम्हारे बीस हजार शिष्यों को मैं भोजन नहीं दे सकता? क्यों भीख माँगते हो?"

"यह मेरा जाति धर्म है।" बुद्ध ने कहा।

शुद्धोधन ने चकित होकर पूछा- "यह जाति धर्म है? बेटा, तुम महासम्मत की जाति में पैदा हुए हो। उस जाति के किसी व्यक्ति ने कभी भी भीख नहीं माँगी है।"

"मैंने सम्मत जाति के बारे में नहीं कहा है। बौद्धों की जाति के बारे में कहा है। यदि लड़के को कोई खजाना मिल जाये तो उसमें से मुख्य वस्तुयें निकालकर पिता को देना पुत्र का कर्तव्य है। इसलिये जो अमूल्य रत्न मुझे मिले हैं, तुम्हें देता हूँ। लो। देरी न करो। धर्म जानकर शुभ पाओ। धर्म जानकर, जो कुछ छोड़ना है, छोड़ दो, जो कुछ पाना है, पाओ। धर्म का पालन करनेवाला सुख पायेगा।" बुद्ध ने सब के सामने पिता को उपदेश दिया।



बुद्ध का उपदेश सुनकर शुद्धोधन ने अपने लड़के के हाथ से भिक्षा पात्र लेकर, उनको और उनके शिष्यों को भोजन बँटवाया। भोजन के बाद, अन्तःपुर की चालीस हजार स्त्रियाँ बुद्ध को नमस्कार करने आई।

उनमें यशोधरा को न देख कर, शुद्धोधन ने उसको भी बुलवाया। यशोधरा ने कहला भेजा-"यदि उनमें मेरे प्रति आदर-अभिमान है तो वे ही मुझे आकर देखेंगे। तब मैं उनकी पूजा करूँगी।"

यह सुन बुद्ध यशोधरा को देखने के लिए उसके कमरे में गये। रास्ते में उन्होंने अपने प्रधान शिष्य, मुगलन और सेरिपृत से कहा-"इन्होंने अनेक जन्मों में मेरी मदद की है। अब वे मुक्ति पाने जा रही हैं। तुच्छ काम को मैंने तो जीत लिया है, पर ये अभी तक नहीं जीत पाई हैं। क्यों कि मुझे देखे उन्हें बहुत समय हो गया है, इसलिये मुझे देखने के लिए उत्सुक हैं, पीड़ित हैं। अगर इस पीड़ा को बाहर न व्यक्त करके, दबा दिया गया, तो उनका हृदय फूट-सा जायेगा। वे मेरे पैर छू सकती हैं। ऐसा करने दिये जाने से, वे हमारे समाज में आ जायेंगी। इसलिये उनको यह करने-से मना न कीजिये।"

यह मालूम होते ही कि उसे बुद्ध देखने आ रहे थे यशोधरा ने बल्कल वस्त्र धारण किये। बुद्ध को देखते ही, यह जानते हुए भी कि वैसा करना गलत था, वह उनके पैरों पर पड कर रोने लगी। परन्तु अपने ससुर को वहाँ देख कर, शर्माती वह खड़ी हो गई।

"यह तेरे प्रति प्रेम के कारण ऐसा कर रही है, तुम इसे क्षमा करो।" शुद्धोधन ने बुद्ध से कहा।

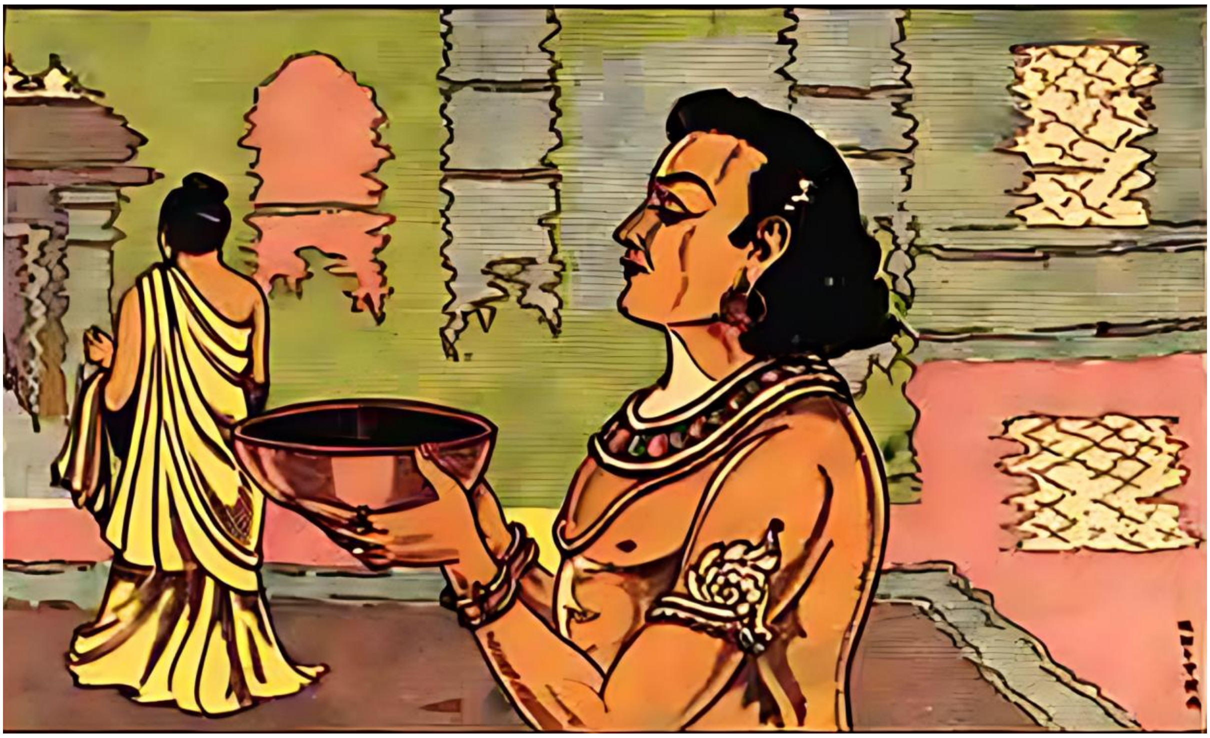
"यह अनेक जन्मों में मेरी सहधर्मणी रहकर, बुद्ध की पत्नी होने के योग्य हुई है।" कहकर बुद्ध ने उसके पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाया। वह सुन यशोधरा का दुख जाता रहा।

शुद्धोधन की दूसरी पत्नी, महाप्रजावती के नन्द नाम का एक लड़का था। बुद्ध के यशोधरा के देखने के एक दिन बाद, नन्द के विवाह की व्यवस्था की गई। उसके साथ नूतन गृह प्रवेश भी होना था। इसलिये बुद्ध उस दिन सवेरे निग्रोधवन से उस उत्सव मण्डप में आये। उनके साथ सब अर्हत भी थे।

नन्द को मोक्ष के मार्ग पर लाना ही बुद्ध का उद्देश्य था।

उन के लिए एक विशेष आसन बनाया गया था। उस पर बैठकर उन्होंने नन्द से कहा-"जानते हो वास्तविक उत्सव क्या है? तुच्छ इच्छाओं का निर्मूलन, ब्रह्मचर्य का पालन, चार सत्यों का अध्ययन व निर्वाण के अर्थ का ग्रहण।" बुद्ध ने उसको यों उपदेश दिया।

शीघ्र ही नन्द बौद्ध मार्ग का अवलम्बन करने के लिए उद्यत हो गया।



बुद्ध उसके हाथ में भिक्षापात्र रखकर अपने विहार को चले आये। दुल्हे की पोषाक में ही, हाथ में भिक्षापात्र लेकर नन्द उनके पीछे विहार गया।

दुल्हन का नाम जनपद कल्याणी था। अपने भावी पति को बुद्ध के साथ जाते हुए उसने छज्जे से देखा। उससे पूछा भी कि वह कहाँ जा रहा था। पर नन्द ने कोई जवाब न दिया।

दोनों के बिहार में पहुँच जाने के बाद, बुद्ध ने नन्द से कहा-"राज्य की आकाँक्षा छोड़कर मेरी तरह सन्यास स्वीकार करो।" नन्द का मन निश्चिन्त न था। वह दुल्हन के बारे में ही सोच रहा था। उसने कुछ न कहा। इसलिये बुद्ध ने अपने प्रधान शिष्यों से कहा-"इसको सन्यास दो।"

तब से नन्द चिन्ता के कारण कमजोर होता गया। दूसरों ने पूछा कि वह क्यों यों दुर्बल होता जा रहा था। "तुम बुद्ध के भाई हो। राजवंश के हो। कभी तुम्हें किसी चीज की कमी नहीं रही। तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं। निश्चिन्त रहो।"





"मैंने जब बुद्ध के हाथ से भिक्षा-पात्र लिया, तभी मेरी दुल्हन जन कल्याणी ने मुझे तुरन्त वापस आने के लिए कहा। उसी के कारण मैं इस प्रकार चिन्तित हूँ।" नन्द ने कहा।

यह बात बुद्ध को मालूम हुई। उन्होंने नन्द से पूछा-"क्या तेरी भावी पत्नी बहुत सुन्दर है?"

"बहुत सुन्दर है।" नन्द ने उसके सौन्दर्य का खूब वर्णन किया।

"क्या उस से सुन्दर स्त्रियाँ इस संसार में नहीं हैं?" बुद्ध ने पूछा।

"जम्बू द्वीप में कहीं नहीं है।" नन्द ने कहा।

बुद्ध ने अपनी शक्तियों के द्वारा नन्द को अप्सरायें दिखाई। "क्या जनपद कल्याणी इनसे अधिक सुन्दर है?"

"इनकी तुलना में तो वह किसी काम की नहीं है।" नन्द ने कहा।

"क्या इनमें से किसी को तुम पत्नी के रूप में स्वीकार करोगे?" बुद्ध ने पूछा।

"यह कैसे सम्भव है?" नन्द ने कहा।

"यदि तुमने मेरे उपदेशों का पालन किया तो यह सम्भव हो सकता है।" बुद्ध ने कहा।

इन बातों के कारण नन्द की चिन्ता जाती रही। वह बुद्ध के उपदेशों को सुनकर जल्दी ही अर्हत श्रेणी में प्रविष्ट कर लिया गया।

बुद्ध को कपिलवस्तु नगर आये ठीक एक सप्ताह हो गया था। यशोधरा ने अपने सात वर्ष के लड़के को खूब सजा सँवार कर उससे कहा-"बेटा, यह तेजस्वी सन्यासी ही तेरे पिता है। उनके

पास बहुत-से खजाने हैं। क्यों कि तुम उनके उत्तराधिकारी हो, इसलिये उनके पास जाकर वे ले लो।"

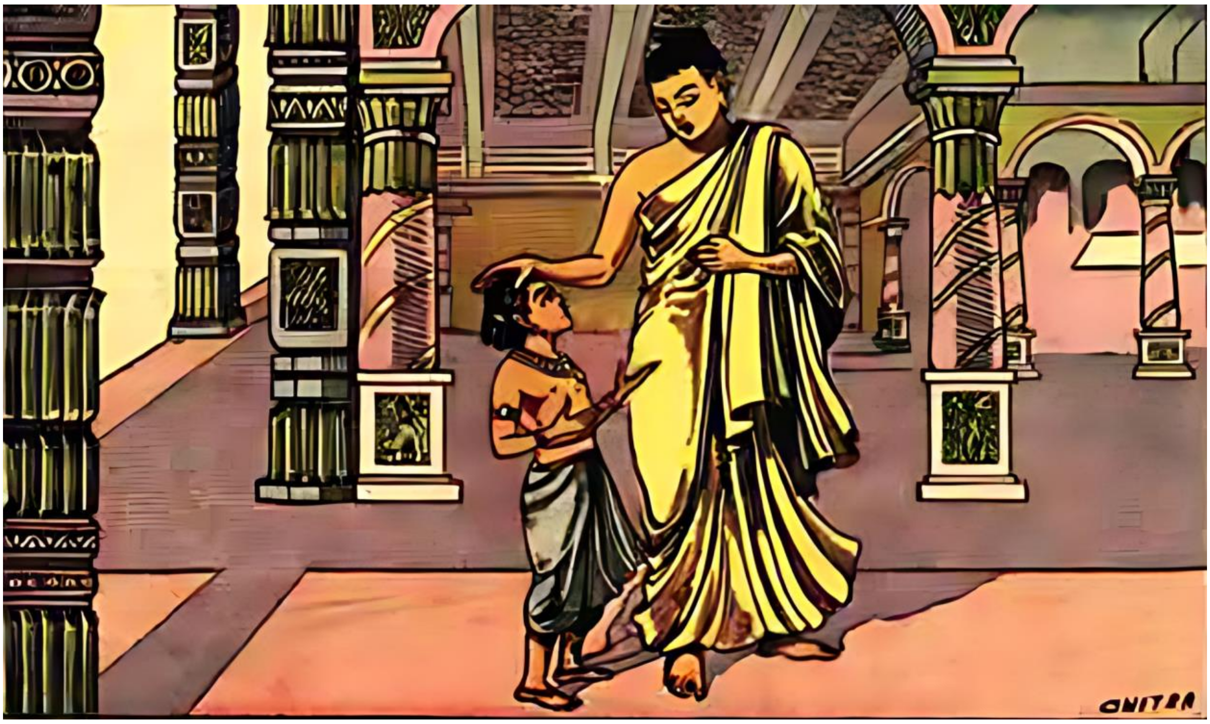
"माँ, मेरा पिता कौन है?" राहुल ने पूछा।

यशोधरा ने छज्जे में से, राहुल को बुद्ध के दर्शन करवाये। उस समय, बुद्ध राजमहल आकर भोजन कर रहे थे। राहुल को उन्हें दिखाते हुये यशोधरा ने कहा "वे हैं तेरे पिता।"

राहुल ने बुद्ध के पास जाकर कहा- "पिता जी," फिर उसने निर्भय होकर कहा-"हे सन्यासी, तेरी सहायता मेरे लिये अमूल्य है।"

बुद्ध ने भोजन समाप्त करके, राहुल को आशीर्वाद दिया। राहुल ने कहा-"माँ ने बताया है कि तेरे पास कुछ खजाने हैं। क्या तुम उन्हें मुझे दोगे?"

बुद्ध के जाते समय राहुल भी उसके साथ गया। न बुद्ध ने उसे मना किया न किसी और ने ही। यशोधरा अपने लड़के को बुद्ध के साथ जाता देख चिन्तित हो उठी। उसे भय था कि राहुल भी नन्द की तरह शायद सन्यास ले ले।



बिहार में पहुँचने के बाद बुद्ध ने सेरिपृत से कहा-"राहुल मेरी सम्पत्ति माँग रहा है। मैं ऐसी कोई सम्पत्ति उसे नहीं देना चाहता जो दुख का कारण हो। शाश्वत सुख देनेवाला सन्यास में उसे दूँगा।" फिर सेरिपृत ने राहुल को सन्यास दिलवाया। यह सुन शुद्धोधन बहुत दुखी हुआ।

उसने बुद्ध के पास जाकर कहा- "मेरे दोनों पुत्रों ने (सिद्धार्थ और नन्द) सन्यास ले लिया है। अब मेरे पौत्र राहुल ने भी सन्यास ले लिया है। मैं अब तक उसको अपना लड़का समझता आया था। उसको भी मुझ से दूर करना ठीक नहीं है। यह अच्छा नहीं है।" उसने इस पर आपत्ति उठाई।

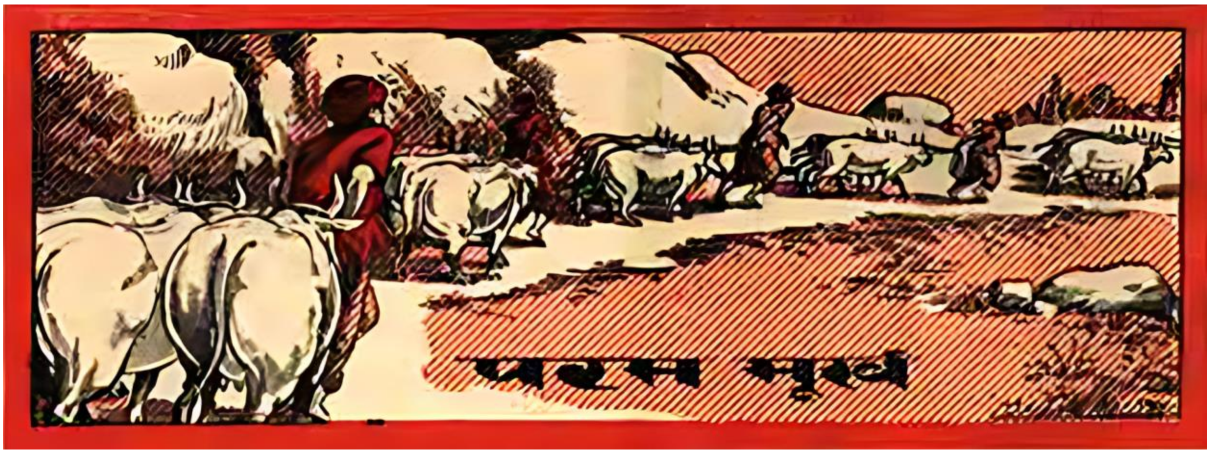
"अब माता पिता की बिना आज्ञा के मैं किसी को सन्यास न दूँगा।" बुद्ध ने शुद्धोधन को वचन दिया।

बुद्धत्व पाने के नौ महीने बाद गौतम पहली बार सिंहल गये। वे महावेली नदी के किनारे, महानाग नाम के उद्यान में उतरे। उस समय वहाँ यक्ष जातिवालों में आपसी युद्ध हो रहे थे। उन्होंने, उस उद्यान में, बुद्ध को मृग चर्म के समान स्थल देना ही स्वीकार किया। परन्तु बुद्ध ने वहाँ उपस्थित लोगों को अपने उपदेशों द्वारा उत्तम मार्ग दिखाया। फिर तीन बार और वे सिंहल द्वीप गये। अपने धर्म का वहाँ प्रचार करके, वे बेलुवन वापस आ गये।

उसके बाद, बुद्ध सिंहल द्वीप दो बार और गये। वहाँ उनके शिष्यों ने उनके स्मरणार्थ कई स्तूप बनवाये। उनके नियमों का पालन करते हुए उन्होंने बौद्ध धर्म को सजीव रखा।

[अभी है]





माधवपुर में राघवलाल नाम का एक धनी किसान रहा करता था। गाँव के आधे खेत उसके थे। खेत हीं नहीं, उसके पास सैकड़ों भेड़ बकरियों, मुर्गियाँ, बत्तखें वगैरह भी थीं। इतना सब कुछ था, पर राघवलाल खुश न था, क्योंकि उसके सातों लड़के निरे मूर्ख थे। अक्ल तो थी नहीं, तिस पर बेपढ़े। दुनियादारी भी न जानते।

जब बच्चे छोटे थे, तो राघवलाल सोचा करता-"बड़े होंगे तो स्वयं रास्ते पर क्या न आ जायेंगे?" समय गुजरता गया। पर वे सयाने न हुए। "जब तक ये मेरे घर मेरा कमाया खाते रहेंगे, तबतक इन्हें अक्ल न आयेगी। अलग रखने पर ही वे अपनी जिम्मेवारियाँ समझ सकेंगे।" यह सोचकर उसने सातों के लिए सात घर बनवाये। "अब से तुम अपने अपने घरों में रहो और अपनी जिन्दगी आप चलाओ।" उसने उनसे कहा। उसने एक एक को तीन तीन अच्छी नस्ल की गायें दीं।

गायों का दूध पीते, खेतों की फसल खाते, सातों मूर्ख आराम से घरों में समय काट रहे थे।

थोड़े दिनों बाद एक बड़ा हाट लगा। सातों भाई अपनी अपनी गायों को लेकर हाट में गये। हाट में सामान वगैरह, ले जाने का उन्हें शौक था।

उसी ग्राम में धनीराम नाम का एक और किसान रहा करता था। बहुत दिनों से उसकी नजर राघवलाल के घर और गौ भैसों पर थी। जब राघवलाल के सातों लड़के अपनी गायों को हाँककर हाट ले जा रहे थे, तो वह उन्हें देखकर ललचाया।



इक्कीस गायें। अच्छी नस्ल की गायें। आस पास के गाँवों में कहीं किसी के पास ऐसी गायें न थीं।

"अरे इतने तड़के कहाँ जा रहे हो?" धनीराम ने उनसे पूछा।

"हाट में गायें बेचने जा रहे हैं।" उन्होंने बताया।

धनीराम ने नाक पर अंगुली रखकर कहा-"अरे अरे, तुम जैसे बड़े घराने के लोग भी क्या ऐसा नीच काम करते हैं? क्या नजर लगी गायों को भी किसी और को बेचा जाता है? यदि आपकी माँ होती तो क्या आप लोगों को यह काम करने देती?" धनीराम ने पूछा।

"नजर हमारी गौवों पर किसने नजर डाली है?" भाइयों ने पूछा।

"हमारे गाँव के बीरु ने इन पर नजर डाली, जब आपके पिता ने उसको मारना चाहा तो वह चम्पत हो गया।" धनीराम ने कहा। उन सातों मूर्खो ने गला फाड़कर कहा-"अरे बीरु तूने यह क्या किया?" वे रोने धोने लगे। उनका रोना सुन गौवें भी सिर हिला हिलाकर चिल्लाने लगीं।

"मेरा विश्वास न हो, तो आप स्वयं देख ही रहे हैं। अगर उन पर नजर न लगती तो क्या वे इस तरह चिल्लाती?" धनीराम ने कहा।

"तो क्या किया जाय धनीराम?" मूर्खों ने पूछा।

"करना क्या है! चमड़े के दाम पर गौवों को बेच दो। नजर चमड़े पर तो लगती नहीं। एक रुपया फी गौ के लिए मिल सकता है। इस रुपये भर के लिए हाट तक जाने की क्या जरूरत है? हमारे घर आओ। गौवों को दे दो और पैसे लेते जाओ।" धनीराम ने कहा।

वे मूर्ख धनीराम को गायें सौंपकर तीन तीन रुपये लेकर हाट में मजा देखने चले गये। इन मूर्खों को हाट में देखते ही लोग उनके चारों ओर जमा हो गये। उन लोगों ने उनसे वे रुपये भी खर्च करवा दिये। जब वे देख दाख कर घर वापस गये, तो उनके पास एक दमड़ी भी न थी।

यह सुन राघवलाल ने सोचा कि उसके लड़के गये गुजरे थे, और वे सुधर न सकते थे। थोड़े समय बाद वह बीमार पड़ा और मर गया। उसके बाद लड़कों का ही राज्य था। वे पिता की सम्पत्ति ऊटपटाङ्ग खर्च में उड़ाने लगे। गाँव में कोई ऐसा न था, जिसने उन्हें न ठगा हो।

एक दिन बड़ा भाई धनीराम के घर गया। वहाँ वराण्डे में एक सफेद पत्थर देखकर पूछा-"यह क्या धनीराम! यह कोई अच्छी मुर्गी का अण्डा मालूम होता है।"

"मुर्गी का अण्डा भी कहीं इतना बड़ा होता है? यह घोड़े का अण्डा है।" धनीराम ने कहा।

"क्या इसे मुझे बेचोगे धनीराम?" बड़े भाई ने पूछा।



"अरे वाह, इसे लाकर मुझे एक साल हो गया है। कल परसों इसमें से बच्चा निकलनेवाला है। में भला इसे क्यों वेचूँगा। इस नस्ल के घोड़े का बच्चा क्या कहीं दो सौ रुपये से कम मिलेगा!" धनीराम ने कहा।

"दो सौ रुपये ले लो और वह मुझे दे दो धनीराम, अण्डे में से मैंने कभी घोड़ा पैदा होता नहीं देखा है।" बड़े भाई ने कहा।

धनीराम ने बहुत देर खुशामद करवाकर कहा-"तुम हो, इसलिए दे रहा हूँ।" उसने उससे दो सौ रुपये वसूल कर लिए और वह पत्थर उसे दे दिया।

उसके बाद सप्ताह भर सातों भाई उसके चारों ओर बैठे रहे। उन्होंने बहुत प्रतीक्षा की। पर अण्डे में से बच्चा न निकला। उन्होंने जाकर धनीराम से यह कहा।

"अण्डे का छिलका जरा मोटा है, इसलिए वह बाहर न निकल पाया होगा। तुम इसे पहाड़ पर ले जाओ। और वहाँ से नीचे धकेल दो। अण्डा टूट जायेगा और बच्चा बाहर निकल आयेगा।" धनीराम ने कहा।



उस पत्थर को उठाकर वे पहाड़ पर ले गये, चोटी पर से मैदान पर लुढ़का दिया। यह लुढ़ककर एक पेड़ से जा लगा। उस पेड़ के पीछे से एक खरगोश बाहर निकला।

"यह हो न हो घोड़े का बच्चा है। पकड़ो, पकड़ो।" सातों उसके पीछे भागे। पर खरगोश उनके हाथ नहीं लगा।

"अरे अभी पैदा हुआ और अभी सरपट मागा जा रहा है। चार-पाँच वर्षों में क्या कोई घोड़ा उसकी तरह भाग सकेगा?" सोचकर वे घर गये।

एक दिन बड़ा लड़का, खिड़की के सामने कुर्सी पर बैठा हुआ था। थोड़ी देर बाद खिड़की में से धूप आई। उसने तुरन्त राज को बुलाकर कहा-"अरे इस खिड़की को फौरन एक तरफ हटा दो। जो कुछ माँगोगे, वह दूँगा। देखा, इस खिड़की में से धूप कैसे आ रही है?"

"पाँच मिनट में यह खिड़की हटा दिये देता हूँ। आप, बस मेरे नाम अपनी बञ्ज़र जमीन लिख दीजिए।" राज ने कहा।

"अच्छा! पहले यह काम तो करो।" बड़े लड़के ने कहा।



"आप जरा टहल आइये।" राज ने कहा। बड़ा लड़का, पन्द्रह बीस मिनट बाद वापस आया। इस बीच, राज़ ने कुर्सी एक तरफ हटा दी। उसने उसके आते ही पूछा-"क्या अब खिड़की ठीक जगह पर है?"

बड़े लड़के ने कुर्सी पर बैठकर देखा। धूप उस पर न पड़कर पास ही पड़ रही थी। "शाबाश, बञ्जर जमीन ले जाओ।" इस तरह सबने उनको ठगा। राघवलाल की सम्पत्ति काफूर हो गई। उनके पास पिता का घर और घरवाली ज़मीन ही बाकी रह गई।

एक दिन धनीराम ने अपने खेत से वापस आते आते गाँव के बाहर, एक पेड़ के नीचे सातों भाइयों को बैठे देखा। वे पैर सामने रखकर पेड़ के चारों ओर बैठे थे।

"तुम सब यहाँ बैठे क्या कर रहे हो? अन्धेरा हो गया है, क्यों नहीं घर जाते?" धनीराम ने पूछा।

"हम भी यह सोच रहे हैं। पर कैसे जायें धनीराम! देखो, हमारे पैर कैसे मिले हुए हैं? किसका पैर कौन-सा है, यह भी पता नहीं लग रहा है। अपना अपना पैर निकाल कर ही तो घर जायेंगे!" मूर्खों ने कहा।

"मैं अलग कर दूँगा, क्या तुम अपना घर और ज़मीन मुझे दे दोगे?" धनीराम ने पूछा। मूर्ख इसके लिए राजी हो गये। धनीराम ने पेड़ पर से एक छड़ी तोड़ी। सबके सिरपर एक एक जमाई। एक एक उठकर घर की ओर भागने लगा।

वचन के अनुसार, उन्होंने अपना घर, ज़मीन, धनीराम को दे दिया। उसके बाद उनका क्या हुआ कोई नहीं जानता।



